पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

पूज्यपाद गुरुदेव का जन्म लगते असौज तीज सन् 1942 में ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद, जनपद गाजियाबाद (पहले मेरठ) उत्तर प्रदेश में हुआ था। इनके पिताजी का नाम श्री नानक चन्द और माता जी का नाम श्रीमती सोना देवी था। लगभग दो मास की अवस्था में श्वासन में लेटने से ही कुछ समय के उपरान्त शिशु की गर्दन दोनों ओर हिलने लगी और होठ फड़फड़ाने लगे। इस क्रिया की पुनरावृत्ति होने पर अज्ञानतावश उपचार प्रारम्भ हो गया। परन्तु उस विशेष अवस्था में जाने की घटनाएँ बढ़ती रहीं और आयु बढ़ने के साथ-साथ मन्त्र-पाठ और प्रवचन स्पष्ट सुनाई देने लगा। छः वर्ष की आयु में इन्हें भयानक चेचक निकली जो इनके मुख-मण्डल पर अपनी स्मृति छोड़ गई।

सात वर्ष की अल्पायु में ही इनके पिताश्री ने अपने गाँव में ही पशुओं व कृषि के कार्य के लिए नौकर रख दिया। धीरे-धीरे इनके प्रवचनों की क्रिया को मनोरंजन व कौतुक का साधन बनाया जाने लगा। एक दिवस प्रवचन की प्रक्रिया के पश्चात् अत्याधिक पिटाई के कारण लगभग 15 वर्ष की अवस्था में भीषण परिस्थितियों में मध्य रात्रि में गृह को त्यागकर विचरण करते हुए अपनी कर्मभूमि बरनावा जा पहुँचे वहाँ पर आप योग मुद्रा में समाधिस्थ होकर प्रवचन करने लगे, जिसकी सुगन्धी आस-पास में तीव्रता से फैल गई। आपने अपने प्रवचनों के माध्यम से वेद ब्रह्म पारायण यज्ञों का आयोजन करना शुरु कर दिया। जन-समूह के अथाह प्रेम व सहयोग से बरनावा लाक्षागृह पर पाँच यज्ञशालाएँ, महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, आश्रम व गऊशाला की स्थापना की, जिसका प्रबन्ध उनके द्वारा स्थापित श्री गाँधी धाम समिति की देखरेख में होता है।

पूज्यपाद गुरुदेव 28 दिसम्बर 1961 में पहली बार दिल्ली प्रवचन के लिए आए। अथाह ज्ञान के भण्डार, आध्यात्मिक जगत की महान् व अद्‌भुत विभूति के प्रवचन सुनने के पश्चात् प्रवचनों को टेप करने का निर्णय लिया गया और कुछ समय के उपरान्त प्रवचनों को टेप करके प्रकाशित करने के लिए पूज्यपाद गुरुदेव की संरक्षकता में वैदिक अनुसन्धान समिति का दिल्ली में गठन हो गया। जन्म जन्मान्तरों के शृङ्गी ऋषि की पुण्य आत्मा ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज इस अज्ञानता के युग में वैदिक संस्कृति का पुनः से उत्थान करने के लिए जीवनपर्यन्त लगे रहे। ऋषि-मुनियों ने अनुसन्धान के द्वारा भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान को अपने जीवन में कितना साकार किया है उसकी अथाह चरमसीमा इनके प्रवचनों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इस अथाह ज्ञान को मानवता के लिए आचरण व व्यवहार में लाने का सरल व श्रेष्ठ मार्ग प्रदर्शित किया है और साहित्य की गुत्थियाँ स्पष्ट की हैं। जिससे मानव अपना व जनसाधारण का कल्याण करते हुए इस भव सागर से पार हो सकता है।

यह दिव्य आत्मा 15 अक्टूबर 1992 को पचास वर्ष की अवस्था में ब्रह्ममूहुर्त के समय अपने लोकों को गमन कर गई। **–वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे परमदेव! तू कल्याण करने वाला है। तू हमारा ही नहीं संसार का कल्याण करने वाला है। आज संसार में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या के हृदय में उस उज्ज्वलता को दे जो आपने सृष्टि के प्रारम्भ में प्रत्येक वेद मन्त्र द्वारा हमें प्रेरणा दी है। उस प्रेरणा को पुनः से जागृत कर विधाता! आपने सृष्टि का निर्माण किया और सर्वप्रथम मानव के लिए ज्ञान का स्रोत दिया, उस आनन्द के स्रोत को आज भी दे। किसको दे? महान् पात्रों को दे। आज हमारे हृदय को पवित्र बना, जिससे हम संसार में उज्ज्वल बनें। विधाता! जब आपकी कृपा होगी तो हम आपकी दया के पात्र बनेंगे। हे भगवन्! तू दया कर और इतनी दया कर कि हमारी आत्मा के द्वारा कोई दोष न आए। विधाता! जब हमारी आत्मा के द्वारा नाना प्रकार के दोष आ जाएँगे, तो हमारा जीवन, जीवन न रहेगा। प्रभु! दया कर।

हे प्रभु! हम कैसे अभागे हैं संसार में। मैं तो भगवन्! वह कर्म करना चाहता हूँ जिस कर्म को करके प्रभु! मैं तुम्हारी गोद में आ जाऊँ। भगवन्! मैंने आज से पूर्व काल में जो पाप किया है उसे क्षमा करो। आज मैं क्षमा चाहता हूँ। प्रभु! तू आज मुझे अपना और अपनाकर अपनी गोद में ले।

हे भगवन्! तू यज्ञ को देने वाला है, प्रेरणा देने वाला है। भगवन्! वह प्रेरणा दो जिससे हम अपना और इस संसार का कल्याण कर सकें। जब विधाता की दया होती है तो हमारी आन्तरिक भावना उज्ज्वल और पवित्र हो जाती हैं।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 588 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 663
वर्ष : 50 44 समग्र वर्ष : 56

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. प्रभु की विचित्रता का दिग्दर्शन	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-21
4. महापुरुषों का जीवन	पूज्यपाद-गुरुदेव एवम् महर्षि महानन्द जी महाराज	22-37
5. ऋषियों के उद्गार		38
6. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		39-42

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को निरन्तर प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) PAN No. – AAAAV7866J
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. 0149000100229389, IFS Code - PUNB 0014900

शृङ्गीऋषि वेबसाईट

Website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

॥ ओ३म् ॥

प्रभु की विचित्रता का दिग्दर्शन

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ इन मनोहर सुन्दर वेदपाठ में उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन आता रहता है जो परमपिता परमात्मा प्रतिभाशाली है। हे मेरे प्रभु! तू कितना अनन्तवान् है। हे प्रभु! तू कितना अनन्तता में परणित रहता है, तेरी महिमा वास्तव में सुन्दर है प्रभु! आपने मानव समाज को, मानव समाज को ही नहीं, प्रभु! आपने प्राणी मात्र को उत्पन्न किया है। और कितनी सुन्दर प्रतिभा है, कितना सुन्दरवाद है, क्या उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। प्रभु! जब आप सृष्टिवाद में रमण करते हैं, तो प्रभु! आपने सृष्टि के प्रारम्भ में कितना सुन्दर रूपक दिया है, कितनी सुन्दर आपकी रचना है, क्या, **वनस्पतियों के रस को एकत्रित करके, आपने वनस्पतियों के रस को एकत्रित करते हुए प्रभु! आपने प्राणी मात्र की उत्पत्ति की।** अहा! ये सुन्दर है, इसका वर्णन कैसे किया जा सकता है, क्योंकि वाणी में इतनी शक्ति नहीं। बेटा! माता के शरीर को किस प्रकार का रचा है प्रभु ने क्या सूक्ष्म बिन्दु के जाने के पश्चात्, परन्तु वह उस बिन्दु में जो कण होते हैं, परन्तु वह जिस इन्द्रिय का, जिस स्थान का बिन्दु होगा, उस स्थान को बेटा! वह परमाणु अकृत होता हुआ मुनिवरो! देखो, उस तत्त्व में रमण करता चला जाता है। माता के गर्भस्थल से बेटा! हम जैसे पुत्रों का जन्म होता है। उस प्रभु की कितनी सुन्दर अलौकिकता है, वर्णन नहीं किया जाता। हे देव! तू कितना महान् है, वास्तव में जैसा सन्निधान से हम स्वीकार करते हैं, वैसा ही प्रतीत होता है।

प्रभु का सुन्दर संकल्प

आज मेरी प्यारी माता और पिता यह कहते हैं, दृष्टिपात पाया जाता है,

क्या यह तो माता-पिता के सम्बन्ध से ही उत्पन्न होते हैं। वास्तव में यह वाक्य यथार्थ है, परन्तु माता-पिता को तो यह ज्ञान नहीं है, क्या यह परमाणु कहाँ का है, कहाँ इसको हमें स्थिर करना है। बेटा! परमाणु वह वनस्पतियों का जो रस है, अन्न का जो रस है, नाना वनस्पतियों का जो रस है, बेटा! वह माता के गर्भस्थल में स्थापित हो जाता है। परन्तु वह नाना इन्द्रियों का रसावादन अर्पित होता हुआ, परन्तु देखो, यह तपस्वी अस्ते उस प्रभु ने सृष्टि के प्रारम्भ से बेटा! सुन्दर सङ्कल्प किया था और वह कैसा सुन्दर सङ्कल्प था, हे पुत्री! ब्रह्मे व्यापा स्वस्ति अभ्यानं। तेरे गर्भ से प्रजा का जन्म हो। मानो तेरे ही गर्भ से गर्भाणि कृति असुतो हे पुत्री! प्रजा का जन्म होगा। मुनिवरो! देखो, यह सङ्कल्प है उसका, और उस यन्त्र को प्रभु ने निर्धारित कर दिया, माता से पुत्री का जन्म होता है, तो उसमें इसी प्रकार की नस नाड़ियों का सङ्गठन होता हुआ, उसकी सुगठिता होती हुई, मुनिवरो! देखो, उसका रक्त उसी प्रकार सुगठित होने लगता है। परन्तु यह सब प्रभु की सुन्दर अलौकिकता का एक मार्ग है। वास्तव में प्रभु की अलौकितता हमें प्रतीत हो रही है।

आज जो मानव यह उच्चारण करने लगे, कि मेरा ही जीवन है, मुझे यह वास्तव में अधिकार है, तो वह वास्तव में सुन्दर नहीं होता, क्योंकि मैंने कल के वाक्यों में कहा था, कि प्रभु कितना महान् है, उस प्रभु की अलौकिकता कितनी उज्ज्वल है, कितनी सुन्दरता में परणित रहती है। आज मुझे समय प्राप्त होने जा रहा है, कि हम वेदों के पठन-पाठन में, वेदों की परम्पराओं में क्या प्राप्त होता है? प्रभु की महती, प्रभु की अलौकिकता का वर्णन और उसकी महती का वर्णन जब हमें दृष्टिपात आता है, तो अन्तरात्मा प्रसन्न होने लगता है। हमें यह अनुभव होता है, क्या यह जो हमारा अन्तरात्मा है, यह कितना उज्ज्वल है, **अञ्चाम् ब्रह्मे अञ्चम् ब्रह्मे अस्ति विश्वा धन नमा असुतो महा गतं ब्रह्मे व्यापकं अस्ते असुतं वामंचतं ब्रीहि असुता,** वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है कि वास्तव में हमें प्रभु की महिमा को विचार-विनिमय करना है। जहाँ वेद के पठन-पाठन का क्रम आता है। आज के वेद पाठ में लोक-लोकान्तरों का वर्णन आ रहा था, परन्तु कहीं बृहस्पति का मण्डल था, तो कहीं जेठाय नक्षत्र का वर्णन था। बेटा! जैसा

प्रभु ने कर्म पृथ्वी मण्डल में रचा, उसी प्रकार का कर्म सूर्य मण्डल में है उसी प्रकार का कर्म चन्द्र मण्डल में है, उसी प्रकार का मङ्गल मण्डल में है। उसी प्रकार कर्म बृहस्पति और आरुणि और जेठाय आदि मण्डलों में स्वीकार किया जाता है। परन्तु उसका सङ्कल्प कितना महान् है, कितना अलौकिक है, कितनी विचित्रता उसमें रहती है। बेटा! मानव अन्त में नेति-नेति क्योंकि मानव का जीवन शब्द को उच्चारण करने लगता है। क्यों करने लगता है? अल्पज्ञ होने के कारण, उसमें अल्पज्ञता आने के कारण वह नेति शब्द का प्रतिपादन करता है। क्योंकि अनन्तता में तो प्रभु ही विराजता है, और यह अनन्तता के द्वार पर चला जाता है। जब अनन्तता के द्वार पर चला जाता है, तो यह नेति उच्चारण कर देता है क्योंकि जो बाह्य, प्रकृति का जो क्षेत्र था वह समाप्त हो गया।

जीवन को सुन्दर बनाने की प्रेरणा

मेरे प्यारे! ऋषिवर आज हमें विचार-विनिमय करना है। हमें अपने जीवन को सुन्दर बनाना है। जिससे हम, वास्तव में हमारा जीवन सुन्दर, उस काल में बनेगा, जब हम प्रभु की महती का वर्णन करेंगे, उसकी अलौकिकता पर विचार-विनिमय करेंगे। क्योंकि हमारा जीवन बहुत ही सुन्दरता में परणित हो जायेगा। हमारे जीवन में एक अलौकिकवाद होना चाहिये, उसी वाद से हमारे जीवन की सुगठिता सुन्दर होती है। मेरे प्यारे! ऋषिवर आज का हमारा वाक्य यह क्या कहता चला जा रहा था, ध्रुवं ब्रह्मे ध्रुव सुता है, हे ध्रुवा! व्रते आज हमें अपनी ध्रुवा गति को भी जानना है, और ऊर्ध्वागति का भी जानना है। दोनों प्रकार की गति को जानते हुए, हम अपने जीवन को वास्तव में राष्ट्रीयता में ले जायें, सुन्दरता में ले जायें, क्योंकि वह तो हमारा ही जीवन, अहा! हमारी ही मानवता से सुगठित रहता है। उसी को हमें सुन्दर और उज्ज्वल बनाना है जिससे हमारे जीवन का जो सार है, मनोनीतता है उसको वास्तविकता में सार्थक कर सकें।

ये है बेटा! आज का हमारा वाक्य क्योंकि आज हमें सूक्ष्म-सा समय देखो, मेरे प्यारे महानन्द जी भी चाहते हैं, परन्तु यह तो आगे समय उच्चारण करूँगा। मैं अपने कुछ वाक्यों पर, आज इनके वाक्यों पर भी मुझे टिप्पणी प्रगट करनी

है। कल मेरे प्यारे महानन्द जी ने चन्द्रमा के ऊपर अपना कुछ विचार प्रगट किया, मङ्गल पर अपने वाक्य प्रगट किये, आज मुझे तो इतना प्रतीत नहीं है, जितना इन्होंने कल मुझे वर्णन कराया है। विज्ञान से सम्बन्ध में, परन्तु इनकी विज्ञान में गति सुन्दर प्रतीत हो रही थी। वास्तव हम जो विचार-विनिमय करते हैं, परम्परा से, परम्परागतों के आधार पर, क्या मङ्गल मण्डल में प्राणी मात्र का जहाँ सम्बन्ध रहता है, वहाँ वास्तव में इनका वाक्य यथार्थता में प्रतीत हो रहा था।

चन्द्र मण्डल

आगे रहा यह वाक्य, कि आज हम यह विचार-विनिमय करने लगते हैं कि हम चन्द्र मण्डल में जाते हैं। कल मेरे प्यारे महानन्द जी ने यह प्रगट कराया कि अहा! मण्डलं ब्रहे विज्ञानं ब्रहे अस्ति जीतनति ब्रहे अस्ति ऐसा मुझे ऋषि ने वर्णन कराया, कि चन्द्र मण्डल को आज का वैज्ञानिक जीवन को स्वीकार नहीं करता है। परन्तु देखो, इसमें, मैंने अपने प्यारे पुत्र से कहा था, कि मैंने अपने प्यारे महानन्द जी से कहा था कि वास्तव में बहुत पूर्व काल में कहा था, कि जीवन होता है। परन्तु रहा यह वाक्य, कि हम **चन्द्र मण्डल में वायु और जल को प्रधानता देते हैं,** परन्तु देखो, महानन्द जी ने भी कल के वाक्यों में यह कहा था, आज भी ये उच्चारण इनके मन में एक शङ्का उत्पन्न हो रही है, और वह कि जब वहाँ चन्द्र मण्डल में वायु प्रधानता है, तो मृत्त मण्डल का वैज्ञानिक उसमें वायु का अभाव क्यों उच्चारण करता है। परन्तु यह बड़ा ही गहन प्रश्न है जिसके ऊपर हमें विचार-विनिमय करना है, इसके ऊपर वास्तव में विचार-विनिमय करना है, और इसका विचार यह है क्या हम पृथ्वी मण्डल से जाते हैं, अथवा पार्थिव तत्त्व को ले करके जाते हैं। तो जहाँ वायु में पार्थिव तत्त्व अधिक नहीं होता, जल तत्त्व होता है अग्नि का कुछ मिश्रण अधिक होता है वहाँ देखो, पार्थिव तत्त्व वाले को वायु सूक्ष्म प्रतीत होती है। क्योंकि पार्थिव तत्त्व के नाते, सूक्ष्म प्रतीत होती है। अहा! क्योंकि रहा यह यन्त्र भी उसी के आधार पर बने हुए हैं, यन्त्र भी पृथ्वी मण्डल के ही परमाणुओं से सुगठितता अधिक होने के नाते, पार्थिवता अधिक होने के नाते अहा! उसमें अकृते वायु की प्रधानता भी

स्वीकार की गई है। इसी प्रकार आज हमारा जो पृथ्वी मण्डल है, इसमें जहाँ हम पार्थिव तत्त्व और जल तत्त्व प्राप्त कर सकते हैं और हम यह वायु तत्त्व तीनों को एक समय तीनों को एक समानता में विचार करते हैं, क्योंकि जल और पार्थिकता की प्रधानता मानी गई है, परन्तु ऐसा हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में भी स्वीकार किया गया है।

आगे आचार्यों ने यह कहा कि वायु की प्रधानता की विशेषता ही है चन्द्र मण्डल में, क्या वायु वहाँ इस प्रकार क्यों है? क्योंकि वायु का इतना वेग इसीलिये है, यहाँ के प्राणी को, मृत मण्डल के प्राणी को इसीलिये सूक्ष्म प्रतीत होता है, क्या वह इस वायु में पार्थिव कण अधिक न होने के कारण, उसमें ऐसा प्रतीत होता है। अहा! परन्तु वायु की प्रधानता वास्तव में थी, हम वास्तव में स्वीकार करते हैं। अब हम यह वाक्य कैसे स्वीकार करें कि इसका हमारे द्वारा प्रमाण क्या है। हमारा वेद कहता है **चन्द्रो गच्छतं ब्रह्मे अश्वन्ति वायु नाम चन्द्रक्रते असवानि व्यापकृति विज्ञन ब्रह्मा अस्वन्ति लोकाः।** ऐसा हमारे यहाँ वेद कहता है, आचार्य वेद का प्रमाण हमें प्राप्ति करा रहा है, क्या ऐसा ही चन्द्रमा में स्वीकार किया जाता है। क्या वायु सुते वायु में प्रधानता, परन्तु जल का मिश्रण है इसीलिये चन्द्रमा में शीतलता की प्रधानता स्वीकार करते हैं। हमारे यहाँ तो ऐसा ही, क्या जैसे चन्द्रमा की कान्ति जब पृथ्वी मण्डल पर आती है, पृथ्वी मण्डल पर आती है, तो वह कान्ति जब आती है वह कान्ति मानो जब किसी रूप में आती है, तो जल की प्रधानता होती है, शीतलता अधिक आच्छादित होती है और शीतलता देखो, इतनी दूरी तक पृथ्वी मण्डल से आने तक इतनी शीतलता रहती है, क्या वह भी बीज को अमृत प्रदान कर सके और देखो, कृषक करने वाले, कृषि वाले, कृषक को इसके अन्न में मानो अमृत की वह ओत-प्रोत करा सके, तो वह चन्द्रमा की मानो शीतलता में मानो मिश्रित होता है वह प्रमाण भी हमें प्राप्त होते हैं, और इसका अनुभव भी इसी प्रकार से अनुभव प्राप्त होता रहता है।

मङ्गल मण्डल

रहा यह वाक्य, अब रही मङ्गल मण्डल की चर्चायें, क्योंकि मङ्गल मण्डल

में पार्थिव तत्त्व प्रधान स्वीकार करते हैं, परन्तु पृथ्वी मण्डल का जो प्राणी है, उनसे उन प्राणियों का जो स्थूल है, वह कुछ सूक्ष्म है, उनका इतना स्थूल नहीं है। इसका कारण क्या है? उसका केवल कारण यह है कि पार्थिव तत्त्व तो प्रधान है, परन्तु पार्थिव तत्त्व प्रधान होने के कारण, जल का मिश्रण सूक्ष्म होता है। जल के मिश्रण में सूक्ष्मवाद होता है इतना नहीं, परन्तु उसमें अग्नि में प्रति कृति होती है जहाँ जिस मण्डल से, इतना कृतियों में मुनिवरो! देखो, वहाँ वायु में, पृथ्वी में, अग्नि में अधिक प्रचण्डता होगी, मानो देखो, उस काल में सूर्य प्रकाश देने वाला है, वहाँ सूर्य का प्रकाश मानो इस प्रकार का आता है, जिससे मानव का जो स्थूल है, उसका जो शरीर है वह पृथ्वी मण्डल से सूक्ष्म होता है।

मङ्गल व शुक्र मण्डल में जाने का मार्ग

हमारे यहाँ कुछ ऐसा माना गया है **सोनाम ईश्वत** नाम की जो रेखा होती है, जो मङ्गल मण्डल पृथ्वी के मध्य में होती है, और मध्य का उसका जो अप्रोत भाग होता है, वह माधुरी लोकों से उसका सम्बन्ध होता है। मानो उस रेखा का जो सम्बन्ध होता है तो वह, तीन मण्डलों का समूह प्राप्त होता है, तीन मण्डलों की सीमा होती है। देखो, मङ्गल की और ध्रुव आकृति और पृथ्वी की तीनों की सीमा होती है। तो सीमा होने के कारण मानो जब यहाँ का, पृथ्वी मण्डल का प्राणी जाता है, तो शुक्र का, शुक्र में **होम्** नाम की रेखा होती है उससे उसका समन्वय हो जाता है। तो चारों मण्डलों का एक भू आस्वात त्रीणि अणवेत धातु नाम का दोनों में मिश्रण रहता है। सब प्रकार की रेखाओं में इनका मिश्रण होने से एक-दूसरे से वहाँ प्राण की गति सन्नोत होती है। जो विशेष प्राण होता है, उसकी गति में जैसे गति शान्त होती है, कही मध्यम हो जाती है, और कहीं उसमें क्योंकि तीव्रता आ जाती है, इसीलिये क्योंकि एक-दूसरे मण्डल से मण्डल का मिलान न हो सके। क्योंकि उसमें त्राहिमाम्-त्राहिमाम् न हो जाये, ऐसा हमारे यहाँ स्वीकार किया गया है। जब पृथ्वी मण्डल का प्राणी चलता है, तो वह यन्त्र को उस आङ्गन से ले जाना होता है, इन लोकों का जहाँ मिलान होता है, रेखाओं का, एक-दूसरे से, और एक मार्ग मानो **सोम भाग** नाम का मार्ग होता है, उस

सोम नाम भाग के मार्ग से, यन्त्र जब पृथ्वी मण्डल का जाता है, तो मङ्गल में जाता है। मानो वह मङ्गल मण्डल में चला जाता है, और एक और जो हमारे यहाँ **सभम भू मध्य** नाम की एक रेखा है, जिसका सम्बन्ध मानो जहाँ जिसको हम शुक्र मण्डल कहते हैं, शुक्र और मङ्गल की रेखाओं से दोनों का समन्वय होता है, यदि यन्त्र उस आङ्गन को चला गया उस यान के मार्ग से चला गया तो वही यन्त्र शुक्र में जा करके, अपना अस्तित्त्व बना सकता है। तो ऐसा हमारे यहाँ कुछ विज्ञानशालाओं, विज्ञानवेत्ताओं ने स्वीकार किया है। परन्तु मैं इस सम्बन्ध में अधिक चर्चा नहीं प्रगट करना चाहता हूँ, क्योंकि मैं उस विज्ञान में नहीं जाना चाहता।

राष्ट्रीय सिद्धान्तों का मन्थन

मुझे तो केवल आत्मा की चर्चा, आत्मा का विवेचन वर्णन करना था। मैं आज उसी स्थान पर चला जाऊँ, वाक्य उच्चारण करता हुआ, जहाँ से मुझे, इतनी दूरी मैं पहुँच गया था, वाक्य यह प्रारम्भ हो रहा था, क्या हम प्रभु की विचित्रता पर विचार-विनिमय करते चले जायें। ये मैं सब प्रभु की विचित्रता का वर्णन करा रहा हूँ। उनका दिग्दर्शन करा रहा हूँ क्या प्रभु जो देव है, जो सच्चिदानन्द है वह कितना सखा है और उसकी अलौकिकता में कितनी महानता विराजमान है। इसी प्रकार हमारे यहाँ कुछ, ऐसा भी स्वीकार किया गया है, जो मैंने महानन्द जी के वाक्यों पर कुछ सूक्ष्म टिप्पणी भी दी है, और भी मैं टिप्पणी करने वाला हूँ। रहा यह वाक्य क्या इन्होंने राष्ट्र सम्बन्ध में, अपने वाक्य प्रगट किये हैं परन्तु इन्होंने सुन्दर वाक्यों में अपने विचार प्रगट किये इससे पूर्व काल में भी राष्ट्रीय विचार प्रगट किये हैं, राष्ट्रीय जो विधान है, राष्ट्रीय जो एक सार्वभौम सिद्धान्त है, जो एक विचारघारा है, विचारकों की, राष्ट्रीय विचारधारा में, मानो मैंने बहुत पूर्व काल में कुछ अपने वाक्य प्रगट भी किये हैं, आज भी मैं उनको करने के लिये तत्पर रहता हूँ। हमारा यह वाक्य चलता रहता है, मुनिवरो! देखो, यह तो एक प्रतीत है कि राष्ट्र का जो निर्माण है, वह निर्माण वेदों में भी आता है, उसी पर भगवान् मनु ने भी उसी, कुछ उसके ऊपर टिप्पणियाँ,

अपना विचार व्यक्त किया है। आज मैं भी उसके सम्बन्ध में, अपने विचार दे सकता हूँ और देना चाहता हूँ कि राष्ट्र कैसा होता है?

राजा के चरित्र निर्माण का स्त्रोत

मेरे प्यारे! राजा कितना सुन्दर होना चाहिये? कल महानन्द जी ने बहुत ही सुन्दर शब्दों में, अपने विचार व्यक्त किये थे। उन विचारों में बहुत सुन्दर वाक्य थे, परन्तु चरित्रवान के सम्बन्ध में कितने सुन्दर, अब विचार यह करना है, कि राजा के द्वारा चरित्र कैसे आता है और चरित्र की उपलब्धि राजा के द्वारा कहाँ से होती है? क्योंकि जहाँ नाना प्रकार की सामग्री होती है, ऐश्वर्य होता है, विज्ञान होता है, विज्ञान की नाना प्रकार की सुविधाएँ होती हैं, और वह मुनिवरो! ऐसे भयङ्कर प्रकृति के वन में जा करके, और भौतिकवाद विज्ञान में जा करके, अपने चरित्र को कैसे सुरक्षित बना सकता है। यह प्रत्येक मानव के द्वारा प्रश्न रहता है। परन्तु यह हमारे द्वारा भी प्रश्न है, एक मानव भयङ्कर वन में तपस्वी बना हुआ है, उसके द्वारा एक ही सुविधा है, नाना प्रकार के वृक्षों के फल, फूल इत्यादि पान करता हुआ, अहा! अपने योगाभ्यास में रमण करता रहता है, उसी योगाभ्यास में रमण करता हुआ, अपनी कृति असुतां को जानता रहता है, वह आत्मचेतना में लगा रहता है। परन्तु उसके द्वारा वह सुविधा नहीं है, क्योंकि वह केवल पर्वतों में विराजमान है, योगाभ्यास में है, प्राणायाम कर रहा है। परन्तु जहाँ मानव को नाना प्रकार की सुविधाएँ हैं – पत्नियाँ भी, गृह नाना प्रकार की सुन्दर-सुन्दर और भी सुविधाएँ हैं, ऐसे स्थान में अपनी सुरक्षा को कैसे बनाना होगा यह बड़ा विचारकों का एक विषय बन जाता है?

मैं इस सम्बन्ध में अपने विचार देना चाहता हूँ, क्योंकि मैं अपने प्यारे महानन्द जी के इन वाक्यों के ऊपर अपनी टिप्पणी देना चाह रहा हूँ, इसका उत्तर यह है कि हम, राजा को यह विचारना है सबसे प्रथम कि तू ऐसे भयङ्कर युग में आ गया है, जहाँ तुझे नाना प्रकार की सुविधाएँ हैं, नाना प्रकार के आहार और व्यवहार की सुविधाएँ हैं, उसमें तू आज तो अपने जीवन को भ्रष्ट भी कर सकता है। तो इसका उत्तर केवल हमारे ऋषि-मुनियों ने यह दिया है कि राजा

को किसी भी काल में अपने धर्म को नहीं त्यागना चाहिये। अब धर्म की मीमांसा करनी है, कि धर्म किसे कहते हैं क्योंकि धर्म के ऊपर नाना प्रकार की महानन्द जी धर्म के ऊपर अपनी टिप्पणियाँ–टिप्पणियाँ होती रहती हैं। मेरे प्यारे! नहीं दे सके हैं, अहा! और मेरे प्यारे महानन्द जी धर्म के ऊपर प्रगट भी कर सके हैं, और मैं भी अपने विचार सूक्ष्म से देना चाहता हूँ – धर्म किसे कहते हैं?

ईश्वरीय धर्म

धर्म को विचारना है। मानो देखो, धर्म वह होता है, जो मानव का अन्तःकरण, जिसको स्वीकार करता है। उस मानव (राजा) को मानवीय धर्म नहीं अपनाना चाहिये परन्तु मानव के मानवीय धर्म के साथ-साथ, जो मानव के बनाएँ हुए धर्म होते हैं, उनको नहीं अपनाना चाहिये। राजा को उस धर्म को अपनाना है, जो ईश्वरीय धर्म होता है। ईश्वरीय धर्म क्या है? ईश्वरीय धर्म की क्या मीमांसा है? कि मानव नेत्रों से दृष्टिपात करता है, तो वह किसी भी रूढ़ि को स्वीकार करने वाला हो, मानव अपना धर्म कुछ स्वीकार कर ले, परन्तु वह नेत्रों से ही दृष्टिपात करेगा, नेत्र क्योंकि ईश्वरीय धर्म है, सुदृष्टिपान करना उसका धर्म है वह ईश्वरीय धर्म के आधार पर, वह नेत्रों से दृष्टिपात करता है, मुख से नाना प्रकार के आहार करता है, देखो, फल इत्यादियों को पान करता है, नाना प्रकार के अन्न को पान करता है, जल को पान करता है तो वह ईश्वरीय धर्म है। इसी प्रकार श्रोत्रों से वाक्य स्वीकार किया जाता है, वह किसी भी रूढ़ि को स्वीकार करने वाला हो, परन्तु वह उसी को स्वीकार करेगा। इसी प्रकार आगे चल करके अहा! जो भी कुछ इन्द्रियों से व्यापार होता है, वह इन्द्रियों के, ईश्वरीय धर्म के आधार पर होता है। तो आज उसे अपने इन्द्रियों के धर्म को विचारना है, हमारा इन्द्रियों का धर्म क्या है इसी के ऊपर धर्म की मीमांसा को जानता हुआ, राजा को ईश्वरीय धर्म अपना करके, बेटा! अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना है, राष्ट्र को सर्वोपरि बनाना है। क्योंकि देखो, उस धर्म के ऊपर ही तरङ्गों वाला जो प्राणी है, वह नाना प्रकार के भौतिकवाद से वह लिपायमान नहीं होगा, क्योंकि वह भौतिकवाद से जब लिपायमान होता है, परन्तु वह उसी काल में होता है, जब धर्म को अपने से दूरी

कर देता है। ईश्वरीय धर्म को उसे अपनाना है और ईश्वरीय धर्म को अपना करके, वह नाना प्रकार का, जो विशालवाद है, भोगवाद है, उससे बेटा! उदासीन रहना है। पति-पत्नी, दोनों को उदासीनता में रमण करते हुए, मानव धर्म को अपनाना है, और सुगन्धि को अपनाना है, दुर्गन्धि को त्यागना है। केवल समाज में सदाचार को लाना है, परन्तु लाने का केवल एक ही उपाय है कि वह ईश्वरीय धर्म को अपनाता चला जाये। जब ईश्वरीय धर्म को अपनायेगा, तो उसमें न तो हिंसा होगी, मानो उसमें अहिंसा परमोधर्म है। **अहिंसा परमोधर्म, यह राजा का सर्वप्रथम लक्षण होता है, एक उसका धर्म होता है।**

इसी प्रकार आगे चल करके ऋषि-मुनियों ने कहा है, आचार्यजनो! वेद भी कहता है कि राजा को स्वयं अपनी प्रजा के ऊपर विचार-विनिमय करना होगा, क्योंकि राजा का जो जीवन होता है, वह भी योगी के तुल्य होता है। जैसे योगी का जीवन होता है परमात्मा के आश्रित रहते ही, इसी प्रकार देखो, राजा का जीवन भी देखो, परमात्मा के आश्रित होता है, परमात्मा के ऊपर होता है उसका जीवन। इसीलिये उसे, मानव को विचारना है कि पुरोहित इत्यादि मेरे सुन्दर हों, ब्राह्मण समाज मेरे यहाँ शिक्षा देने वाला हो, अहा! जब वह, प्रजा के ऊपर शासन करने का अधिकार उसको होता है, शासन नहीं कर सकता, क्योंकि शासन कौन करता है? जिसे ऐश्वर्य भोगना हो, परन्तु वह तो सेवक होता है, सेवा करने का उसे ही अधिकार होता है जो स्वयं अपनी इन्द्रियों का शासक बन जाता है, वह प्रजा की सेवा कर सकता है, प्रजा को सद्मार्ग पर ला सकता है। मुनिवरो! देखो, वही सुन्दरता में परणित होता है। और जो मानव अपनी इन्द्रियों पर संयम नहीं कर सकता, इन्द्रियों पर उसकी विचारधारा नहीं उत्तम बनती, तो वह मानव यह उच्चारण करता है कि मैं आज साम्यवाद को लाना चाहता हूँ, वैदिकवाद ही ऊँचा साम्यवाद है, उसको लाने में मानो सदैव असमर्थ रहता है।

राजा प्रजा का सेवक

कल मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक वाक्य और वहाँ सुन्दर प्रगट किया कि जो मानव यह कहते हैं साम्यवादी हूँ, वह राजा क्यों बन गया, क्योंकि राजा

बनने का उसे अधिकार भी नहीं होता, कितना सुन्दरतम है, क्योंकि राजा नहीं होता, साम्यवादी विचारधारा के जो व्यक्ति होते हैं, और जो राजा होते हैं, वह अपने को राजा ही स्वीकार नहीं करते, वह अपने को केवल सेवक स्वीकार करते हैं और प्रजा की सेवा वही व्यक्ति कर सकता है जो अपनी इन्द्रियों पर, अपने मन को विजय कर लेता है। इन्द्रियों को विजय प्राप्त करने से वह राजा बन जाता है, सुन्दर बन जाता है, निर्मोही हो जाता है। क्योंकि उसके लिये, सर्वत्र प्रजा उसके लिये पुत्र के तुल्य है, जब वह प्रजा सर्वत्र पुत्र के तुल्य है, अहा! वह जो पुत्र के तुल्य प्रजा बन चुकी है, उसी के ऊपर तो विचार-विनिमय करना है, सुन्दरता को लाना है, अहा! वह प्रजा उसकी पुत्र है, अपना केवल जो पुत्र होता है, वही पुत्र नहीं होता, सर्वत्र प्रजा उसकी पुत्र के ही तुल्य होती है। परन्तु दुराचार करने राजा कहाँ जायेगा, किस स्थान को वह दृष्टिपात करेगा? क्योंकि वह सब उसके पुत्र के तुल्य ही, माता और पिता हैं। परन्तु कहाँ जायेगा वह दुराचार करने के लिये बेटा! वह उसके लिये मार्ग ही प्राप्त नहीं होता।

राष्ट्र का धर्म

बेटा! हमें यह विचारना होगा हम सब वैदिक साम्यवाद की चर्चा, मेरे प्यारे महानन्द जी ने प्रगट भी की थी वह बड़ी सुन्दर थी। परन्तु वैदिक साम्यवाद में ही तो कहता है, एक साम्यवाद की जो महिमा है, वह बड़ी विचित्र है – भगवान् मनु ने तो इसके ऊपर विचार और टिप्पणियाँ प्रगट की हैं, वह वेद को, धर्म को आगे को ले करके चलता है। साम्यवाद भी धर्म को आगे ले करके चलता है, और कर्त्तव्यवाद में भी धर्म समाहित रहता है। जैसे माला, जैसे मनके में, धागे में, मनके पिरोएँ हुए होते हैं, इसी प्रकार देखो, कर्त्तव्यवाद में भी धर्म है। इसी प्रकार जैसे धागे में जो मनके होते हैं, जैसे लोक-लोकान्तर प्राण रूपी धागे में पिरोएँ हुए होते हैं, नाना प्रकार की रेखाओं में नाना लोक-लोकान्तर पिरोएँ हुए होते हैं, इसी प्रकार यह राष्ट्र का धर्म कहलाया गया है। अहा! हम वैदिक साम्यवाद की चर्चा करें, परन्तु न प्रतीत मेरे प्यारे महानन्द जी साम्यवाद की चर्चा क्यों प्रगट करते रहते हैं।

राष्ट्रीय विधान

हमारे यहाँ राष्ट्रीय विधान कहता है, जिस समय क्योंकि एक अवस्था मानव की शून्य हो जाती है, जिस समय देखो, वह देखो, सोमरस की अवस्था में, जब उसका तीसरापन समाप्त हो जाये, तो चौथेपन में, उसे गृह को त्याग देना चाहिये। हमारे वेदों में भी साम्यवाद है, और देखो, उच्चारण करने वाले, मेरे प्यारे महानन्द जी ने वर्णन कराया कि आज का मानव, मानो संन्यास मार्ग में पर स्थिर है, और वह उस स्थान को नहीं त्यागना चाहता। अहा! वह कौन होते हैं? मानो वह स्वार्थवाद के लिये राष्ट्र नहीं हो सकता, क्योंकि राष्ट्र को तो स्वार्थवाद को त्यागना ही होगा।

एक विचार और देना है और यह हमारी, जैसा मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक वाक्य और कहा था कि राजा में वैश्य प्रवृत्ति होनी चाहिये, राजा के विधान में अथवा नहीं, यह बहुत सुन्दर विचार था, मेरे प्यारे महानन्द जी का। परन्तु मैं भी आज उस वाक्य को पुनः से, उसकी पुनरुक्ति तो नहीं करूँगा, केवल सूक्ष्म से विचार देना चाहते हैं।

प्रभु का विधान और जीवन

जब राजा के मन में यह विचार आ जाता है कि द्रव्य को एकत्रित कर, परन्तु राजा द्रव्य को एकत्रित करने की राष्ट्र में प्रवृत्ति उस काल में आती है जब उसका ऐश्वर्य, उसका स्वार्थ पराकाष्ठा पर चला जाता है, और उसकी पद की, जो द्रव्य की लोलुपता, उसकी अधिक इच्छा उसे हो जाती है, उस काल में वह निश्चित हो जाता है, क्या, वह द्रव्य को एकत्रित करने की प्रवृत्ति बन जाती है, परन्तु द्रव्य एकत्रित करना, द्रव्य तो उसको इतना ही लेना है राष्ट्र कोष में जितना उसमें आता है। परन्तु जब वह राष्ट्र को एकत्रित करता है, तो उसके भाग बनाता है। तो राष्ट्र भाग भिन्न होता है और जो अपने कर्मचारियों का देखो, भाग भिन्न होता है और जो देखो, दान का भाग होता है, वह भिन्न होता है। परन्तु जब भागों का विभाजन हो जाता है, तो राजा को उसी भाग को अच्छी प्रकार

देखो, उसको अपने कोष में एकत्रित कर लेना चाहिये। और वह एकत्रित क्यों कर लेना चाहिये? क्योंकि राष्ट्र के बहुत से कार्य होते हैं, मानो कर्मचारी होते हैं, रक्षा का कार्य भी उसी के आश्रित होता है, क्योंकि रक्षा कौन करेगा? क्षत्रिय और क्षत्रिय उस हम सभी, रक्षक किस काल में रक्षा करेगा, जिसका आहार व्यवहार पवित्र हो और वह रक्षा किसकी करेगा? वैश्यों की, वह रक्षा प्रजा की करेगा, ब्राह्मण की करेगा, ब्राह्मण पर कोई आक्रमण न कर दे, मानो जैसे प्रभु ने हमारा यह मानव शरीर का निर्माण किया है, मानव शरीर का निर्माण करते हुए, प्रभु देव ने उसकी विचित्रता में आता है, सबसे प्रथम प्रभु ने देखो, ब्रह्मा का स्थान बनाया है, दक्षिण भाग में मानो देखो, जहाँ मस्तिष्क रहता है, मस्तिष्क देखो, नाना प्रकार की नाड़ियों का समूह है, और ज्ञान और विज्ञान का भी यह समूह है, क्योंकि इसमें **चार मस्तिष्क** माने गये हैं – एक मस्तिष्क होता है, एक लघु मस्तिष्क होता है, एक ब्रह्मरन्ध मस्तिष्क होता है, एक महा मस्तिष्क होता है। चार प्रकार के मस्तिष्क होते हैं और चारों प्रकार के मस्तिष्कों में मुनिवरो! वास ब्रह्मा का रहता है, ब्राह्मण की उसमें विराजमानता रहती है। उसी में वह रमण करता रहता है। उसके पश्चात् वह जो, उसके पश्चात् वह जो भुज है, उसमें क्षत्रिय विराजमान रहता है। क्योंकि वह रक्षा करता है। आज कोई मानव, मानव के मस्तिष्क पर कोई आक्रमण करता है, तो भुजबल उसकी रक्षा करने के लिये चले जाते हैं। यह प्रभु क्या विधान है, परन्तु यही तो है प्रभु के विधान में, प्रभु ने राष्ट्रीयकरण किया है, और यह कहा हे मानव! यदि तू प्रजा को कर्त्तव्यवाद में लाना चाहता है, तो **जैसा मैंने यह तेरा शरीर बनाया है, निर्माण किया है, उसी के आधीन हो करके, उसी के समूह में आ करके, तुझे वास्तव में राष्ट्र का निर्माण करना है।** आगे वैश्य का स्थान आता है, जो भी हम आहार करते हैं, नाना प्रकार के पदार्थों का आहार करते हैं, ब्राह्मण के द्वार से जाता है। ब्राह्मण, त्यागी और तपस्वी होता है, रसना कितनी त्यागी और तपस्वी है, बेटा! रसना नाना प्रकार के आहार और व्यवहार करती है, नाना प्रकार के सुन्दर घृत को पान करती है। गो घृत को पान करती है, गो दुग्ध को पान करती है, परन्तु रसना के वहाँ एकत्रित भी नहीं होगा, कितना त्याग उसके द्वारा होता है। वह त्यागता हुआ

क्षत्रियों से होता हुआ, वह क्षत्रिय उसको ग्रहण नहीं करते, क्योंकि वह जो भाग है, वह वैश्य का है, वैश्य उसको पचाता है, वैश्य उसको सुन्दर बनाता है, रस बनाता है, और उसको सुन्दर रूपों से अपने आप ही देखो, उसके विभाजन हो जाते हैं। देखो, जहाँ जो इन्द्रिय है, जहाँ-जहाँ शरीर में जो भाग है, परन्तु वह उसके ही द्वारा चला जाता है, वही वह उसका स्थान प्रतीत हो जाता है। तो उसके स्थान में, एक माधुर्यता विराजमान हो जाती है। उसके पश्चात् वह जो वैश्य है, परन्तु वह सबको अपना-अपना भाग परणित कर देता है, वह जो क्षत्रिय का भाग है, क्षत्रिय को, ब्राह्मण को, ब्राह्मण का भाग है, शूद्र को शूद्र का भाग है, मुनिवरो! देखो, मानव के रक्त से ले करके और लघु मस्तिष्क तक अर्पित कर देता है। वह सब अपनी-अपनी आकृतियों को विभाजन करता चला जाता है और वह जो विभाजनवाद है, मानो वह वैश्य के द्वारा होता ही है। मैंने बहुत पूर्व काल में वर्णन किया परन्तु वैश्य के द्वारा इतना विभाजन हो जाता है, तो विभाजन होते ही, उसकी जो विभाजनवाद की जो प्रक्रिया है, वह रमण करती हुई वह मानो देखो, वह क्षत्रिय को उतना भाग प्राप्त होता है, जितना उसका भोग जितना उसका विभाजन, जितना उसका वह विभाजन कर देता है।

इसी प्रकार आज हमें यह विचार-विनिमय करना है, कि जैसा प्रभु ने यह शरीर बनाया है, यदि क्षत्रिय स्वयं देखो, राजा रक्षा करने वाला हो, स्वयं वैश्य का कार्य करने लगेगा, तो वैश्य का कार्य जब क्षत्रिय करने लगा, तो सेवा किसकी करेगा? परन्तु सेवा बन ही नहीं सकती, अहा! उसमें वह जो प्रवृत्ति है सेवा करने की आ ही नहीं सकती, क्योंकि वह तो द्रव्यपति बन गया है, **द्रव्यपति में देखो, सेवा करने की प्रवृत्ति नहीं होती है, वह द्रव्य से तो सेवा कर सकता है, परन्तु यदि कोई आक्रमण करेगा, तो उसकी वह सेवा नहीं कर सकता।** क्योंकि वैश्य जो है, क्योंकि बिना नम्रता के द्रव्य को एकत्रित नहीं कर सकता। क्योंकि हमारा जो उदर होता है, वह सबसे नम्र होता है शरीर के भाग में सबसे नम्र होता है, मानो देखो, उसमें कोई आकाश तत्त्व ही प्रधान होता है, और जहाँ आकाश तत्त्व की प्रधानता होगी, और जहाँ बहुत ही नम्र होगा, वह रक्षा नहीं कर सकता। क्योंकि रक्षा कौन करेगा जिसके देखो, जिसके भुजबलों में देखो, सुन्दर

बल होता है, और वह जो भुज बल होते हैं, मानव के लिये, अहा! रक्षार्थ के लिये होते हैं, प्रभु ने बनायें हैं। अहा! उनमें देखो, मानो देखो, अस्थियों से बना हुआ होता है, और कठोर होता है वज्र के तुल्य कठोर होता है, वही तो रक्षा करेगा। आज कोई मानव यह कहने लगे, कि क्या आज हम उदर से, हम अस्थि की रक्षा कर सकें, तो यह नहीं हो सकता। परन्तु रक्षा करेगा, इससे करेगा, इसीलिये ऐसा हमारे यहाँ ईश्वरीय विधान स्वीकार किया गया है, और ईश्वरीय जो विधान है, वह अकाट्य है, उसको कोई संसार में नष्ट नहीं कर सकता। इसीलिये हमारे यहाँ, ऐसा कहा है, क्या राजा को वैश्य प्रवृत्ति कदापि नहीं बनानी चाहिये।

राजा यदि वैश्य प्रवृत्ति में चला गया, तो वह रक्षा, राष्ट्र की किसी भी काल में नहीं कर सकता। इसीलिये हमारे यहाँ, उनका कार्य क्या है, उनका कार्य यह है कि वैश्य, इतना कठोर बन गया है, वैश्य देना नहीं चाहता, वह दूसरों को देना नहीं चाहता, न ब्राह्मण को देना चाहता है, न वैश्य को, न अपने आप ही, उसको अग्रत करना चाहता है, और न शुद्र को, और न क्षत्रियों को। क्षत्रिय का कर्त्तव्य है, क्या, उस वैश्य को खण्ड-खण्ड कर देना चाहिये। उस वैश्य को खण्ड-खण्ड करो, परन्तु उसके प्रभाव में न आ जाओ। उसकी नम्रता में यदि क्षत्रिय आ गया तो आज क्षत्रिय रक्षा नहीं कर सकेगा। मानो उसका कर्त्तव्य है, एकत्रित करने वाले को दण्ड देना चाहिये, और जो एकत्रित करता है, मानो उसे दण्ड दे करके, उसका वितरण सुन्दर-सुन्दर होना चाहिये। राष्ट्र की रक्षा, राजा की आवश्यकता इसीलिये होती है, क्योंकि वैश्यजन जब एकत्रित करना प्रारम्भ कर देते हैं जैसे उदर में मानो अजीर्ण हो जाता है, इसी प्रकार जब राजा के राष्ट्र में एकत्रित करना प्रारम्भ कर देते हैं, तो राजा के राष्ट्र में अजीर्ण हो जाता है, और उस अजीर्ण की औषध क्या है – अजीर्ण की औषध क्या है, अजीर्ण की औषध है नाना प्रकार के वनस्पति, परन्तु वह उदर के लिये, तो वनस्पति कार्य करती है, उसमें देखो, किसी में पित्त प्रधान होता है, किसी में वायु प्रधान होता है, वह उसको पान करने से, दोषों को पृथक्-पृथक् किया जाता है। इसी प्रकार राष्ट्र के दोषों को नष्ट करने के लिये वह वज्र रूपी औषधि है राष्ट्र में, परन्तु वज्र रूपी जब औषधि दी जायेगी वैश्यों को, तो वैश्य सुन्दर रूपों से उसका वितरण करेंगे और राजा के राष्ट्र में वह जो

अजीर्ण हो गया था, वह सब अजीर्ण समाप्त हो जायेगा। तो यह प्रवृत्ति के कोई राष्ट्र भी है हमें इसे बनाना है, इसी में धर्म है, इसी में कर्त्तव्यवाद है, इसको जानने के लिये मानव को सदैव तत्पर रहना चाहिये।

व्यापकवाद

मैं तो कोई विशेष चर्चा तो प्रगट करने नहीं आया हूँ, मैं तो केवल उस प्रभु की विचित्रता का वर्णन कर रहा था, और यह प्रभु की ही विचित्रता है, क्या **प्रभु ने कितना सुन्दर विधान इस मानव शरीर में रचा है।** इसीलिये यह राजा को चाहिये, क्या वह अपने मानवत्व पर अधिपथ्य होना चाहिये, इन्द्रियों पर अधिपथ्य होना चाहिये, और राष्ट्रवाद पर सुन्दर अधिपथ्य होना चाहिये। जिससे देखो, वह राजा के लिये ऐश्वर्य नहीं होता, राजा को तो स्वयं यह चाहिये कि वह स्वयं अपने भुज बलों से कार्य करे, परन्तु वह निर्मोही रहने का प्रयास उसमें होना चाहिये, क्योंकि निर्मोही जितना होता है, उतना संसार से उदासीन होता है। जितना एक योगी को उदासीन बनना है, इससे कुछ सूक्ष्म मानो देखो, राजा को उदासीन बनना है। क्योंकि व्यापकवाद से योगी बनते हैं, व्यापकवाद से दार्शनिक बनता है, और व्यापकवाद से ही वह राजा बनते हैं। यह है बेटा! आज का हमारा वाक्।

आज के इन वाक्यों का अभिप्रायः यह कि हमें वास्तव में विचार-विनिमय करना है, क्या, हम प्रभु के विधान को ले करके चलें, प्रभु की महिमा को ले करके चलें, और प्रभु की विचित्रता को ले करके अपने जीवन को उन्नत बनाना है, और उसकी रचना पर विचार-विनिमय करना हमारा वास्तव में कर्त्तव्य होता है। यह बेटा! आज मुझे सूक्ष्म चर्चा प्रगट करनी है, क्योंकि महानन्द जी के वाक्यों पर मुझे टिप्पणी देनी थी, वह टिप्पणी हमारी समाप्त हो गई है।

मोक्ष के लिये संन्यास

रहा यह वाक्य इनका क्या संन्यास को प्राप्त नहीं होते। बेटा! मैं उच्चारण करने के लिये तत्पर होता हूँ क्या मस्तिष्क में चरित्रवाद की जब तक प्रतिभा है,

वह राजा बना रहे, परन्तु यह अनिवार्य नहीं है, कि वह प्रजा के लिये बना रहे, उसको राष्ट्र का कार्य जब तक है तब तक करना चाहिये, इसमें कोई ऐसा वाक्य नहीं है, जितना भी उसका मस्तिष्क, उसका शरीर, उसकी मानो स्मरण शक्ति कार्य कर सकती हो, उसका चरित्र सुन्दर हो, तो वह जब तक उसकी मनोनीत इच्छा हो और वह कर सकता हो, उस कार्य को तो करना चाहिये, उसके ऊपर किसी प्रकार का बन्धन नहीं है। ईश्वरीय कोई बन्धन नहीं है। मानो देखो, **संन्यास भी लेना चाहिये, यदि उसे मोक्ष की इच्छा है, परमात्मा के चिन्तन की इच्छा है,** तो वास्तव में क्योंकि उसके द्वारा होता ही है, क्योंकि उसको इसीलिये उसे संन्यास ले लेना चाहिये राजा को, क्योंकि राष्ट्र की प्रजा में त्याग भावना आती है, त्याग भावना की प्रवृत्ति से वह कार्य कर लेना चाहिये, इसमें किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं होता। परन्तु रहा यह वाक्य कि ईश्वरीय विधान है या नहीं, क्योंकि प्रजा को सुन्दर बनाने में, वह संन्यास ले ले, त्याग प्रवृत्ति के लिये, तो इसमें भी कोई दोष नहीं होता।

यह वाक्य आज का हमारा समाप्त होने जा रहा है, अब समय मिलेगा तो शेष चर्चायें कल प्रगट करेंगे। कल मेरे प्यारे महानन्द जी को सूक्ष्म-सा समय और प्रदान कर सकते हैं, आज का समय इतना आज्ञा नहीं दे रहा था, क्योंकि समय बहुत सूक्ष्म था और वाक्य और भी उच्चारण करने थे। तो यह आज का वाक्य अब समाप्त हो गया है, अब समय मिलेगा तो विचार कल प्रगट करेंगे। क्योंकि जब हमारे वाक्यों में सूक्ष्मता रह जाती है, वह उनकी पूर्ति कर देते हैं। तो आज का वाक्य यह समाप्त हो गया है, अब शेष चर्चायें कल प्रगट करेंगे।

ओ३म् ब्रह्मा भगा माणं सर्वश्चमा गतम्।

दिनाँक : 24 अगस्त, 1969
स्थान : महाशय कृष्ण हाल,
जोर बाग, नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

महापुरुषों का जीवन

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ नित्य प्रति उस मनोहर क्रियाएँ अथवा उनका सुन्दर वर्णन प्रायः आता रहता है। जब हम यह विचार-विनिमय करने लगते हैं कि वेदों का जो पवित्र ज्ञान है, वह हमें किस मार्ग के लिये प्रेरित कर रहा है – उसकी सुन्दरता, उसकी मानवता और उसकी विचित्रता पर मानव को सदैव विचार-विनिमय करना है, क्योंकि वेद मन्त्रों में कौन-सा विषय नहीं है संसार का उस प्रकृतिवाद, राष्ट्रवाद और विज्ञानवाद – तीन प्रकार की व्याख्या वेदज्ञ हमें प्रकाश में परणित करता है, तीन व्याख्या देता है। हमारे यहाँ इनको बेटा! ऋत और सत में परणित किया गया है। दो ज्ञान हैं – ऋत और सत। ऋत नाम प्रकृति की समिधाओं का है, और सत नाम ब्रह्म का है। और वास्तव में कुछ ऐसा भी माना गया है कि आत्मा, परमात्मा और प्रकृति तीनों का विवरण करता है, और व्यवहार में ज्ञान उपासना भी इसी के क्रम द्वार से आती है।

प्रभु का ज्ञान विज्ञान

बेटा! वेदों से हमें क्या वस्तु प्राप्त होती है, जो हम सदैव उच्चारण करते रहते हैं, हम नित्य प्रति अपने वाक्यों में प्रगट करते रहते हैं। वेद ज्ञान हमें सूर्य मण्डल और भी नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों पर पहुँचाने के लिये सदैव तत्पर रहता है। इसके पश्चात् अब यह द्वितीय वाक्य है, कि हम कौन से विज्ञान को जानना चाहते हैं। हमारा आध्यात्मिक विज्ञान भी है, वह कितना सुन्दर है, जो मानव को सम्पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है। एक भौतिकवाद है, जितना मानव भयङ्कर वन में चला जाता है, जितना भी प्रकृति की तरङ्गों में चला जाता है, जितना भी

परमाणुवाद में मस्तिष्क चला जाता है, उतनी इच्छा प्रबल होती है। तृष्णा भी बलवती होती रहती है, क्योंकि प्रकृतिवाद भी ऐसा है, राष्ट्रीय शुद्धम् राष्ट्रवाद है। राष्ट्रवाद के ऊपर हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों ने बहुत सुन्दर-सुन्दर वाक्य प्रगट किये हैं, परन्तु इसके विधान में भी भिन्न-भिन्न वार्त्ताएँ आती हैं। मैंने कल के वाक्यों में कहा था कि राष्ट्र का जो विधान है, ये मानव मन माना नहीं बना सकता, क्योंकि इसका जो निर्माण, इसकी जो प्रतिभा है, वह ईश्वरीय सम्बन्धित है। क्योंकि **प्रभु ने जैसा नियम बनाया है, उसी के आधार पर तो हमें अपने राष्ट्र और मानवता का निर्माण, उसकी प्रतिभा को विचार-विनिमय करना है।** मेरी प्यारी माता! जिस समय अपने पुत्र को उत्पन्न करने की इच्छा होती है, तो माता यह निर्णय नहीं कर सकती, कि मैं पुत्र उत्पन्न करूँ, अथवा पुत्री उत्पन्न करूँ। उसका निर्णय ही इस प्रकार का नहीं होता। परन्तु यदि वह आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद के ऊपर भी उसका अनुसन्धान हो और अपनी टिप्पणियाँ हों, अपने मन के ऊपर संयम हो, तो हो सकता है कि माता उन वाक्यों को जान सकती है। उन वाक्यों को भी जान सकती है, उस विज्ञान को जान सकती है जो प्रभु ने रचाया है। कैसी सुन्दर रचना है, कि माता के द्वार से रचना हो रही है, परन्तु माता को ही ज्ञान नहीं हो पाता, हास्य.... कैसी विचित्रता है।

शब्द की रचना

यह सब विचित्रताओं के ऊपर मानव को विचार-विनिमय करना होगा। मानव के मन से प्राण से नाना प्रकार का शब्द का नाद होता है, परन्तु वह नाद अन्तरिक्ष से आता है, और वह नाद केवल उसका मूल क्या है? इसके ऊपर विचारना है। वाणी के ऊपर मानव को संयम करना है कि वाणी की जो शब्द की रचना होती है, शब्द के ऊपर विचार-विनिमय करना है। मानो कोई मानव अपशब्दता में चला जाता है। उस वाक्य को, वाणी को अपशब्द उच्चारण करता हुआ, अशुद्ध वाक्यों में ले जाता हुआ, वह वाणी का शोधन तो नहीं हुआ। ऋषि-मुनि कहते हैं कि वह वाणी का शोधन होना चाहिये और हमारे ऋषि-मुनियों ने तो यह कहा है कि मानव को, हमारे यहाँ परम्परा काल में, एक

समय महर्षि शोभन ऋषि महाराज को, उनकी वाणी पर संयम नहीं रहता था। परन्तु जब वाणी पर संयम नहीं रहता, तो ऋषि मुनि कहा करते थे, कि भई! तुम वाणी पर संयम करो। तो वाणी पर संयम न करने से उनकी कितनी भी तपस्या, परन्तु वह गायत्री का पठन-पाठन करते, परन्तु वाणी पर संयम ने होने के कारण, वाणी का तप न होने के कारण, वह सब व्यर्थ हो जाता था। तो ऋषि कहते हैं, आज वेद भी कहता है, कि वहाँ ब्रहे अस्तु पिशाच अक्रते अभया नमो रुद्रा क्योंकि **शब्द की रचना अन्तरिक्ष से होती है, और अन्तरिक्ष में ही वह वाणी रमण कर जाती है।**

ऋषि कहते है, आचार्यों ने कहा है, वेद भी कहता है कि वाणी से अशुद्ध उच्चारण करना, वह जो वायु मण्डल है, उसको अशुद्ध करती चली जाती है। ऋषि मुनि कहते हैं, कि जितना भी वाणी में अशुद्धवाद होगा, अशुद्ध के साथ साथ क्रोध होगा, उसके साथ-साथ अभिमान भी होगा, तो जितनी यह प्रक्रिया उसके साथ रहेगी, उतना ही परमाणुवाद में अधिक एक नवीन प्रकार की गति आती रहेगी, और वह जो परमाणुओं में गति आयेगी, वह सुन्दर-सुन्दर परमाणु भी दूषित होते चले जायेंगे। तो यह ऋषि कहते हैं, वेद कहता है बेटा! तो मेरे प्यारे! ऋषिवर आज हमें बहुत सुन्दर विचार-विनिमय करना है, अनुसन्धान की वेदी पर जाना है। यह संसार परम्परा से, इसी प्रकार से चला आ रहा है, किसी काल में यहाँ धर्म की प्रबलता हो जाती है, तो किसी काल में अधर्म की प्रबलता हो जाती है। परन्तु न तो धर्म ही नष्ट होता है और न अधर्म ही नष्ट होता है। ऐसा प्रायः इस संसार में अनुभव भी किया गया है, और कुछ ऐसा प्रतीत भी होता है।

नेत्रों की ज्योति

हमारे इन वाक्यों का अभिप्रायः यह कि हमें सदैव विचार-विनिमय करना है, हम अपनी वाणी पर, अपने मनों पर और अपने नेत्रों पर हमें चिन्तन करना है, क्योंकि नेत्रों का पक्ष भी तो हमें विचारना है। एक मानव नेत्रों से दृष्टिपात करता है परन्तु वह नेत्रों की जो ज्योति वह अशुद्धता के लिये नहीं प्रभु ने प्रदान

की है, वह केवल वेद विचार वेद के शब्दों को, और उनके ऊपर विचार और नेत्रों को इतना सुगठित संयमी बनाना है। क्या हम किसी सुन्दरी को दृष्टिपात करें, तो उसमें भी व्यापकवाद हो, उसमें भी प्रभु को दृष्टिपात करें। और हम किसी राष्ट्र की विचारधारा पर जायें, तो वहाँ भी हम प्रभु को ही साक्षी बनायें, क्योंकि वह जो रचियता है, वह प्रभु है, उस रचियता के ऊपर हमें वास्तव में बल देना है। विचार-विनिमय करना है, क्योंकि **संसार में जब मानव स्वयं ऊँचा होगा, तो यह संसार हमें स्वयं ऊँचा ही ऊँचा प्रतीत होगा,** और जब इस संसार में स्वयं हमारे हृदय में अशुद्धवाद होगा, हम दूसरों की त्रुटियों को दृष्टिपात करते रहेंगे, तो बेटा! हम इस संसार को, हम इस संसार में अपने बल को ऊँचा बना ही नहीं सकते। हमारे यहाँ बेटा! बहुत से ऋषि-मुनियों ने परम्परागतों से अपने जीवन की तपस्या, क्योंकि महर्षि दुर्वासा मुनि बेटा! हमने बहुत समय पूर्व भी हमने साहित्य, इतिहास प्रगट किया था। उनका जो साहित्य था, उनकी जो विचारधारा थी, क्योंकि देखो, जो दूसरों को नष्ट करने की प्रवृत्ति जिसके हृदय में होती है, दूसरों को अपमानित करने की दृष्टि होती है, उसका परिणाम भयङ्कर होता है। ऐसा ऋषि-मुनियों का विचार है कि मानो मानव के जन्म-जन्मान्तरों के तप भी नष्ट हो जाते हैं, तो ऐसा ऋषि मुनि कहते हैं, हमें सदैव इसके ऊपर विचार-विनिमय करना होगा। मानव को अपमान करना बहुत सहज होता है, परन्तु मानव का मान करना यह सहज नहीं होता। क्योंकि संसार में स्वामी बनना, बहुत ही सुन्दर होता है परन्तु सेवक बनने में, नाना प्रकार की बाधाएँ आती रहती हैं।

सेवक

मुझे स्मरण है, जब हम गुरु के समीप जाते, तो मार्गों में मर्गराजों के मध्य में विराजमान हो जाते थे। बेटा! परन्तु यदि उस काल में अभिमान होता, मान होता, तो उनके मध्य में नहीं जा सकते थे। परन्तु देखो, वह कटु शब्दों का प्रतिपादन भी होते रहते हैं, परन्तु यहाँ देखो, राजा बनो, तो सेवक बनो परन्तु ज्ञानी बनो तो सेवक बनो, सेवा – अपने-अपने जैसा उनका दायित्व होता है,

उसी प्रकार के वह सेवक होते हैं। जब यहाँ सब संसार में सब सेवक बनेंगे, और अपने प्रभु को चैतन्य देव को अपना स्वामी बनाएँगे, तो बेटा! हमारा जीवन सर्वोत्तम बनता चला जायेगा। परन्तु देखो, उनके ऊपर विचार-विनिमय अनुसन्धान की वेदी पर जाना है। हमें सदैव अपने विचारों से इतना सुगठित बनाना है, कि हम वास्तव में सेवकत्व में रमण करते चले जायें।

बुद्धिमान

मेरे प्यारे महानन्द जी बहुत से शब्दों को ऐसे कटुता में ले जाते हैं, परन्तु देखो, वह कटुता, वह होती रहती है, अहा हो सकता है कि सात्विकवाद में कटुता का प्रतिपादन होता है। परन्तु वह सात्विकवाद भी मानव की वाणी को अशुद्ध बना देता है। मानव की वाणी को जब अशुद्ध बना देता है, हमारी जब वाणी अशुद्ध हो गई, तो हमारा जीवन ही क्या रहा संसार में? हमारा तप तो कुछ नहीं रहा, क्योंकि तप की जो मीमांसा है, वह आचार्यों ने बड़े सुन्दर रूपों से वर्णन की है। आज हमें उसके ऊपर वास्तविक रूप से विचार-विनिमय करना है, **हमें प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों को विचारना, अनुसन्धान करना और अपने ऊपर संयम करना, यह सबसे प्रथम मानव का लक्षण होता है।** बुद्धिमानों में आज कोई मानव यह कहता है, कि मैं सर्वस्व बुद्धिमान हूँ, तो परमात्मा के प्रति, मैं बहुत ही सूक्ष्म बुद्धिमान हूँ। आज कोई मानव यह कहता है कि चन्द्रमा में जाने के लिये बुद्धिमान बन गया, आज कोई मानव यह कहता है, कि वेद की पोथी को मैंने अध्ययन करने के पश्चात्, मैं बुद्धिमान बन गया। परन्तु यह नहीं, बुद्धिमान वह व्यक्ति होता है जो बुद्धियों से अपनी इन्द्रियों पर संयम कर लेता है, जो संयमी बन जाता है। जो मानव अभिमानित हो जाता है और उसे अभिमान आ जाता है क्षेम करता हुआ तो वह संसार में केवल अक्षरबोधि होता है, अक्षर बोध में उसकी जो मानवीयता होती वह सब नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है, ऐसा आचार्यजन कहते हैं। तो बेटा! हमें उसके ऊपर सदैव विचार-विनिमय करना है, अनुसन्धान करना है, अनुसन्धान की वेदी पर जाना है जिससे हमारे जीवन का, मानवता का सुन्दर प्रसार होता रहे, और मानवता की सुन्दर वेदी पर

हम रमण करते हुये, अपने जीवन को इस प्रकार लेते चले जायें, जैसे मुनिवरो! मानव के शरीर में, मानव के मुखारबिन्द में, बेटा! जैसे रसना हो – रसना नाना प्रकार के रसस्वादन करती है। परन्तु देखो, वह दन्त के मध्य में रहती है, और नाना प्रकार के स्वादन करती है, परन्तु अपने द्वारा कुछ नहीं होता और जिस मार्ग को वह प्राप्त करने के लिये आना था आती है संसार में। तो यह बेटा! मैं अपने विचारों को शान्त करने जा रहा हूँ, अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपने कुछ सूक्ष्म से विचार प्रगट करेंगे।

पूज्य महर्षि महानन्द मुनि जी के उद्‌गार

ओ३म् मधु व्रत्यं सवार आभ्यां गतं ऋषि वन्धना।

मेरे पूज्यपाद-गुरूदेव ने मुझे आज पुनः से पुण्य अवसर प्रदान किया है। वास्तव में, गुरुदेव के जो सुन्दर उद्‌गार, वह मेरे अन्तःकरण को छूते चले जा रहे थे, स्पर्श करते हुए, मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे मैं आज ज्ञान की गोद में विराजमान हूँ, परन्तु मेरे पूज्यपाद-गुरुदेव नम्रता का और वाणी का बहुत सुन्दर प्रतिपादन करते चले जा रहे थे। आज हम संसार की उस पवित्र वेला पर और अपने उन वाक्यों पर विचार-विनिमय करना चाहते हैं, जहाँ मानव सुन्दर बनता है। परन्तु मानव को सुन्दर बनने के लिये, जैसा मेरे पूज्यपाद-गुरुदेव! ने हमें अभी-अभी वर्णन कराया, उनमें बहुत सुन्दर प्रतिभा थी।

त्याग और तपस्या की प्रेरणा

हमें यह विचार-विनिमय करना है कि यह व्यवस्था कैसे बनेगी, क्योंकि यह संसार कैसे आ सकेगा? केवल चर्चा तो स्वर्ग में जाने की है और मानव स्वर्ग के विचार लाता हुआ, नारकिक बनने की प्रवृत्ति भी लाता है। तो यह कैसे हो सकता है कि मानव दोनों प्रकार की वस्तु को एक ही साथ पान करना, एक ही आङ्गन में पान करना चाहता है। वह स्वर्ग की कामना भी करता है, और नाना प्रकार के भोगविलास की कामना भी करता है, और नाना आज वह रसना को उत्तम भी बनाना चाहता है, सात्विकता में और उस रसना से दूसरों के रक्त को

पान भी करना चाहता है। तो यह कैसे कार्य बनेगा? यह मेरे विचार में नहीं आ पा रहा है। आज इसको सुन्दर बनाने के लिये, वास्तव में मानव को त्याग और तपस्या की आवश्यकता रहती है। मैंने बहुत पूर्व काल में कहा था, कि एक वैज्ञानिक त्याग और तपस्या में जाता है। एक योगी है, वह त्याग और तपस्या में जाता है। तो दोनों का उत्थान हो जाता है, परन्तु दोनों में भिन्नता रहती है। दोनों ही उदासीन हो जाते हैं। आज वास्तव में जब मैं यह विचार-विनिमय करता हूँ, आधुनिक काल के विचारकों पर जाता हूँ, तो आश्चर्य हो जाता है। आज मैं राष्ट्रवाद पर जाता हूँ, तो और भी आश्चर्य आता है और विधान के आगे विधान को विचारने लगता हूँ तो एक महान् ही आश्चर्य आता है। और यदि धार्मिकता को विचार-विनिमय करते हैं, तो आश्चर्य आता है। तो यहाँ तो आश्चर्य, आश्चर्य है। वास्तव में एक तो आश्चर्य प्रभु का आश्चर्य है। एक आश्चर्य, आधुनिक काल के प्राणियों का प्रतीत होता है, आज परन्तु उस आश्चर्य को हमें आशचयर ही बनाना है और आश्चर्य ही रहेगा, परन्तु आश्चर्य कहीं नहीं जायेगा। मानव की प्रवृत्ति में, उस प्रवृत्ति, अर्न्तद्वन्द्व की जो प्रवृत्ति है, वह नष्ट हो जायेगी।

महापुरुषों की वेदना

आज जब मैं राष्ट्रीय वेदी पर जाता हूँ, विचार-विनिमय होने लगता है। परन्तु वहाँ राष्ट्र के जो नियम हैं, वह वास्तव में ईश्वरीय नियम से बहुत ही दूरी हैं, दूरी होने के कारण कटुता मानव को प्रतीत होने लगती है। जब इन वाक्यों का यथार्थता में प्रतिपादन करते हैं तो हमारे जैसे शब्द हैं, वास्तव में कटुता में प्रतीत होने लगते हैं। इसी प्रकार जैसे हमने बहुत पूर्व काल में भी कहा है, आज भी मुझे स्मरण आता चला जा रहा है, कि **हमारे यहाँ जितने महापुरुष आते हैं, उन सबके विचार महान् होते हैं, कोई भी महान् पुरुष आओ, परन्तु उसके विचार महान् होते हैं।** यहाँ का मानव, परन्तु एक-दूसरे के विचारों को नष्ट करने में तत्पर हो जाता है। परन्तु आज मैं रूढ़िवाद की चर्चा प्रगट करने लगूँ, तो आश्चर्य होगा। मेरे पूज्यपाद-गुरुदेव क्यों यहाँ एक से एक, दूसरे को

नष्ट करके, अपने को सुन्दर बना रहा है। परन्तु वास्तव में सार्वभौम विचार यह है, कि संसार में सभी सुन्दर हों, सभी सुन्दर होते हैं। **जैसे जिसका प्रारब्ध होगा, जैसा जिसका संस्कार, जैसे उसकी प्रतिभा होती है, उसी के साथ-साथ उसका जीवन चलता चला जायेगा।** आगे रहा यह वाक्य कि जब महान् पुरुषों की चर्चा करते हैं, तो **प्रत्येक महान् पुरुष का एक ही लक्ष्य रहा है कि यह संसार ऊँचा बनें,** परन्तु उसने अपनी वाणी को सुन्दरता में परणित कर दिया है, परन्तु केवल उसका लक्ष्य यह रहा, कि राष्ट्र और मानव समाज ऊँचा बनें। यहाँ बहुत पूर्व काल में मुझे दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, यहाँ महर्षि मानो देखो, आदि ऋषियों के विचार आते रहे हैं, ऋषियों के विचार परम्परा से ही पोथियों में आते रहे, जैसा महर्षि कपिल मुनि इत्यादियों के विचार आते रहे, सिद्धान्त भी आते रहे और उनकी जो प्रकृति से सम्बन्धित, उनका जो एक महान् दार्शनिक विचार था वह भी आता रहा, और उसके ऊपर भी विचार-विनिमय मानव का होता रहा और होता रहेगा। आगे भी इसी प्रकार चलता रहेगा, परन्तु देखो, **यहाँ महान् समय समय पर महान् पुरुष आते हैं, अपना-अपना कर्त्तव्य करते हुए चले जाते हैं।** मैंने बहुत पूर्व काल में महापुरुषों की अपने पूज्य गुरुदेव से गणना कराई थी, परन्तु इनके हृदय की एक वेदना होती है क्या यह प्रजा ऊँची बनें, उनकी सदैव ही तो वेदना हो रही है अब उनके मानने वालों में, अपने ही और दूसरों के मानने वालों की वेदना में दोष आ जाता है, दोषारोपण हो जाते हैं। उसमें ही उनकी वेदना को न जान करके, आगे चल करके, उसमें रूढ़ि आ जाती है। और **जब रूढ़ि आ जाती है तो उसके नाना प्रकार के सम्प्रदाय बन जाते हैं,** और सम्प्रदाय बनते ही एक दूसरा मानव, एक-दूसरे के घृणा के क्षेत्र में वह मानव चला ही जाता है।

राष्ट्रवाद का कार्य

आज जब मैं यह विचार-विनिमय करता हूँ, कि धार्मिकता क्या है, आज जब मैं दयानन्द के विचारधारा वाले व्यक्तियों में जाता हूँ, तो वह यह चाहते हैं कि वास्तव में यह हमारा सुन्दर मत है। इसी प्रकार जब मैं परम्परा वाले

व्यक्तियों में जाता हूँ, तो वहाँ यह प्रतीत होता है कि वह बड़ा महान् पापी और पामर था। इसी प्रकार नानक के मानने वालों में जाते हैं, वह दूसरों को पामर कहते हैं। मोहम्द के मानने वालों में जाते हैं, वह वहाँ दूसरों को पामर कहा करते हैं, परन्तु जब ईसा के विचारों में जाते हैं, तो वह कहते हैं कि अरे! भोले तुम वहाँ कहाँ जा रहे हो, जहाँ तुम्हें घृणा की दृष्टि से दृष्टिपात किया जाता है, आओ, तुम्हें अपने कण्ठ में लगाते हैं। परन्तु एक-दूसरे मानव को जब धर्म के ऊपर देखो, नाना प्रकार की घृणा मानव क्षेत्र में आती रहती है, तो इसका क्या उपाय है? मानो इसके ऊपर तो मानव की सुन्दर टिप्पणी होनी चाहिये, कि जिस टिप्पणी के आधार पर देखो, ये धर्म और मानवता की रक्षा हो सके, अन्यथा संसार उस वेदी पर चला जा रहा है, क्या यहाँ धर्म और मानवता के ऊपर ही नाना प्रकार का आक्रमण होता रहेगा। परन्तु यहाँ धर्म को नष्ट नहीं किया जाता है, केवल रूढ़िवाद के ऊपर विचार-विनिमय करना चाहिये। महापुरुषों के विचार चुन लो, देखो, सभी के विचारों को चुन लो और सभी के विचारों को चुन करके, एक जो विचार सुन्दर बना लेना चाहिये और उसको बना करके – यह कार्य किसका, यह राष्ट्रवाद का कार्य होता है।

परन्तु आज का जो राष्ट्रवाद है, उसका सिद्धान्त यह है, कि क्या एक-दूसरे को, एक-दूसरे मानव से घृणा करा देना, धर्मों में घृणा करा देना और अपने नेतृत्व की पूर्ति करना, यह राष्ट्र का एक नियम बन चुका है। परन्तु जब यह नियम बन गया है और आज से नहीं, बहुत कुछ समय से यह नियम बन गया, इस नियम का परिणाम यह है, क्या, यह नियम इसीलिये है कि हमारी जो लोलुपता है, हमारा जो स्वार्थवाद है, परन्तु उसमें किसी प्रकार का विघ्न न आ जाये, यह संसार मानो कहीं चला जाओ, धर्म कहीं जाओ, पोथी कहीं जाओ, वेद कहीं चले जाओ, दयानन्द कहीं चला जाओ, देखो, गुरुनानक कहीं चला जाओ, परन्तु कोई भी कहीं चला जाओ, परन्तु हमारा जो आनन्द है उसमें किसी प्रकार का दोषारोपण न आ जाये।

हमें तो केवल अपने दोषों के ऊपर विचार-विनिमय करना है और विचार

यह करना है, कि बिना धर्म के आज जो मानव राष्ट्रवाद को बनाना चाहता है तो वह राष्ट्रवाद कितने समय तक चलेगा परन्तु कितने समय तक वह रह सकेगा? वह कुछ ही समय के पश्चात्, उसकी परम्पराएँ नष्ट हो जाया करती हैं। परन्तु देखो, विचार-विनिमय सभी के ऊपर विचार करना है। आज देखो, मानव परन्तु देखो, मानवता में भी नाना प्रकार के दोषारोपण आ जाते हैं, जब मैं यह विचार-विनिमय करता हूँ, कि महान् आत्माएँ, जिन्होंने संसार के इस पृथ्वी मण्डल पर आये, सुधारकों की चर्चायें प्रगट कीं, सुधारक बने। परन्तु उनका अन्तरात्मा यदि अन्तरिक्ष में यह विचारोंगे, क्या अन्तरिक्ष में यह आत्मा भ्रमण करता है, और वह आत्मा बड़ी व्याकुल होती रहती हैं, क्या यह मेरे जो मानने वाले यह कहाँ जा रहे हैं, मैंने कौन-सा उपदेश दिया था इनको, मैंने तो यह कहा था कि तुम गऊँ की रक्षा करो, मैंने यह नहीं कहा था कि तुम गऊँ का भक्षण करने लगो। परन्तु मैंने तो यह कहा था कि वेद की पोथी को विचारों, सत्य को सत्य स्वीकार कर लो, मैंने यह नहीं कहा था कि राष्ट्रीय यह विचारों में जा करके अपनेपन को, अपनी पवित्रता को नष्ट करते चलो। अहा! वह आत्मा तो इनकी व्याकुलता में परणित रहती है। परन्तु देखो, इसके ऊपर तो विचार-विनिमय ही करना होगा। अनुसन्धान करना होगा, परन्तु अनुसन्धान की दृष्टि से जब इसको विचारोंगे, तो तुम्हें यह प्रतीत होगा कि वास्तव में हमें कहा जाना है। एक मानव दूसरों को कटु शब्द उच्चारण करने में बड़ा सहज रहता है परन्तु देखो, अपनेपन को ऊँचा बनाने में असमर्थ रहता है। आज क्यों असमर्थ है क्योंकि वह दूसरों की त्रुटियों पर विचार-विनिमय करता है, अपनी त्रुटियों को न विचार करके, वह उसमें इस प्रकार के दोषारोपण हो जाते हैं। इसी प्रकार हमें वास्तव में विचार-विनिमय करना है।

धर्म, वेद और संसार

मैं जब संन्यास के मार्ग पर जाता हूँ, तो और ही कुछ प्रतीत होता है। जब मैं संन्यास आश्रम में जाता हूँ, अहम् ब्रह्म अस्मि का सुन्दर उपदेश रहता है। अहम् ब्रह्मस्मि परन्तु देखो, और जिस काल में जब वह उनको छू लेता है, तो

वहाँ अपवित्रता का उपदेश आ जाता है यह क्या है विचारा नहीं जाता? परन्तु इससे प्रतीत होता है, कि धर्म और परमपिता परमात्मा को इस संसार ने अच्छी प्रकार जाना नहीं। परन्तु वह जानने से, मानव एक-दूसरे से घृणा करता है, वास्तव में तो यह कहता है कि मैं धर्म को और मैं वेद को जानता हूँ तो उसके प्रति वह घृणा के क्षेत्र में विराजमान है, तो यह जानो, कि वह वेद के अङ्गों को जानता नहीं, और अङ्ग, उपाङ्गों से वह मानव बहुत दूरी, वह मानव रहता है, उसकी विचारधारा ही बहुत दूरी है।

आगे रहा यह वाक्य कि अब यदि हम यह विचार-विनिमय करने लगें, कि इस राष्ट्र को, आज जो परम्परा चल रही है, परन्तु यह बहुत सुन्दर परम्परा बनने वाली थी, परन्तु देखो, क्या हुआ, क्या इस परम्परा में, जिनको धर्म को ले करके, आगे चलना था, वह धर्म को त्यागते चले गये और जब धर्म को त्यागा गया, उस परम्परा में जो अपनाने में असमर्थ हो गये, असमर्थ क्यों हो गये? क्योंकि पद की लोलुपता में और वह अपने विचारों को स्वतन्त्र बनाने में, क्योंकि विचार स्वतन्त्र नहीं बने मानव के, मानव की वाणी स्वतन्त्र हो गई परन्तु आन्तरिक विचार स्वतन्त्र नहीं बनें। जब मानव के विचार आन्तरिक स्वतन्त्र बनेंगे तो उस काल में यह संसार और मानव समाज ऊँचा बनेगा, राष्ट्रवाद उसका भी ऊँचा बनेगा। परन्तु आन्तरिक जो भावना है, वह पराधीन है, किसके अधीन है, पद के आधीन है, और भी देखो, अन्तरात्मा की वाणी जो है उसको अपनाने में पराधीनत्व माने जाते हैं।

महात्मा नानक

इसी प्रकार जब हम यह विचारते हैं, कि महान् पुरुष कैसे थे। एक समय मानो देखो, यहाँ ऐसा माना गया है कि ऐसे महापुरुष होते रहते हैं, इस कृति काल में भी, महाभारत काल के पश्चात् एक समय महात्मा नानक से किसी मानो यवन ने कहा, कि आप हमारे सम्प्रदाय में आ जाओ, तो बड़ा सुन्दर होगा। उन्होंने कहा कि मैं क्यों आ जाऊँ? तुम्हीं यहाँ आ जाओ, क्योंकि देखो, तुममें हममें किसी प्रकार का अर्न्तद्वन्द्व नहीं है, केवल विचारों का है, उन विचारों का

परिवर्तन कर लो और मैं यवन क्यों बन जाऊँ, क्योंकि यवन बनने से मुझे क्या लाभ होगा? मानो देखो, असुति सुप्रजा यहाँ तो सभी संसार में मानव है, मानव हमें बनना है, और मानवता की पवित्र वेदी पर चलना है। गौ और विद्या की रक्षा करनी है, उसे हमें करना चाहिये। परन्तु देखो, यह सब महापुरुष ने कहा।

महात्मा दयानन्द

एक समय देखो, आचार्य दयानन्द से एक शब्द कहा था, ऋषि से यह कहा गया, क्या तुम देखो, मठाधीस बन जाओ। उन्होंने कहा कि मैं क्यों बन जाऊँ? एक समय यह कहा कि तुम देखो, खण्डन न करो, मण्डन ही मण्डन करो, उन्होंने कहा कि खण्डन करना मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है। अशुद्धियों का खण्डन, मैं सभ्यता के आङ्गन में करूँगा, मधु मेरे द्वारा होगा, और अभिमान की मात्र नहीं होगी, परन्तु देखो, मेरे द्वारा वेद साक्षी होगा। जब वेद साक्षी होगा, तो मैं उस राष्ट्र में हूँ, मैं उस राजा के राष्ट्र में हूँ, क्या जिस राजा के राष्ट्र से मैं कदापि दूरी हो भी नहीं सकता। परन्तु यह महापुरुषों के शब्द हैं, **महापुरुषों के शब्दों पर जाना ही मानवत्व का कर्त्तव्य है।**

महापुरुषों का कर्त्तव्य

शब्द तो उच्चारण यथार्थ है, परन्तु उसमें अभिमान है। वह दूसरे आसन के लिये कहता है कि मैंने यह घोषणा की है, उस घोषणा पर अभिमान आ गया, जब अन्तरात्मा यह कहता है कि जहाँ अभिमान है, वहीं मृत्यु है, इन शब्दों का अच्छी प्रकार प्रतिपादन न हो करके, मानव अभिमानी बन करके अपनेपन से दूरी चला जाता है। इसीलिये यह सब कुछ अशुद्धियाँ भी हैं, परन्तु इन अशुद्धियों को – महापुरुषों का कर्त्तव्य है, आज यह कैसे अशुद्धियाँ समाप्त हों, क्या सब बुद्धिमान एकान्त विराजमान हो करके, शान्त वातावरण में विराजमान हो करके, धर्म के ऊपर अपने विचार प्रगट करें, और धर्म के ऊपर विचार प्रगट करके, एक मत हो करके, एक विचार बना करके और एक प्रतिभा को अपना करके संसार में ऊँचे से ऊँचा विधान बना करके, अपने मानव को सुरक्षा करनी

चाहिये। यह हमारा विचार परन्तु देखो, परम्परा से चला आया है, कुछ काल आयेगा परन्तु ऐसे महापुरुष भी अवश्य होंगे, और यह सभी कुछ कार्य होगा।

परन्तु रहा यह वाक्य क्या देखो, मैंने अभी-अभी कुछ शब्दों में कहा था आज तो नहीं, क्योंकि ब्रह्मवाद में, ज्ञानवाद में, यौगिकवाद में और जब देखो, विज्ञानवाद और प्रकृतिवाद और ब्रह्मवाद में किसी प्रकार का विरोध नहीं है। किसी भी मानो रूढ़िवाद में चले जाओ, द्वितीय मत नहीं हो सकता, जैसे एक मानव नेत्रों से दृष्टिपात करता है, नेत्रों से करेगा, वह किसी मत और किसी भी सिद्धान्त को स्वीकार करने वाला हो। आज के मानव का, यही तो बुद्धिमानों का ब्रह्म विचार है, इसी विचार को ले करके चलना, परम्परा के वाक्य तो सुन्दर थे। परम्परा में देखो, एक राजा स्वयं देखो, एक साधु को दृष्टिपात करके मानो वह अपने राष्ट्रस्थली को त्याग देता था, देखो, वह चरणों को छूता था, ऐसा क्यों था? इसका कारण यही था, क्या देखो, वह जो ब्रह्म विचारक महान् पुरुष थे, वह राजा को जा करके कहा करते थे, हे राजा! तेरे राष्ट्र में इस प्रकार की हानि है, इसको उत्तम बना।

दुग्ध की महिमा

एक समय मुझे स्मरण है यहाँ देखो, जब महाराजा दिलीप के राष्ट्र में देखो, किसी प्रकार की हानि हुई, तो महर्षि रेवक मुनि पहुँचे और महर्षि रेवक मुनि ने कहा हे दिलीप! आज यह रघु प्रणाली मानो देखो, यह जो परम्परा है, मानवीय परम्परा है राष्ट्रीय परम्परा को तुम नष्ट कर दोंगे, अहा! इस प्रकार से नष्ट न करो, और यदि यह इस प्रकार से नष्ट हो गई, वह क्यों कहा, क्योंकि उनके राष्ट्र में उनके यहाँ देखो, गऊँओं पर किसी प्रकार का आक्रमण न करो, आक्रमण हो जाने के पश्चात्, ऋषि ने यह कहा, क्या जब राजा के राष्ट्र में दुग्ध नहीं होगा, तो राष्ट्र कैसे शक्तिशाली बनेगा।

आज कोई मानव यह कहता है कि हम केवल अन्न से ही शक्तिशाली बन जायें, तो यह कदापि नहीं होगा। **जिस राष्ट्र में दुग्ध अधिक होगा, मानो**

गऊँ अधिक होंगी, मानो वह राष्ट्र सुन्दर बनेगा, उस राष्ट्र में मानो शक्ति होगी। मानो विचार-विनिमय करने की शक्ति होगी, आज का राष्ट्र मानो यह भारत भूमि जैसे भगवान् कृष्ण राम की भूमि में मानो देखो, इस प्रकार की नाना प्रकार की जो विड़म्बना आती चली जा रही हैं। अहा! देखो, द्वितीय आङ्गन को चले जा रहे हैं, कि माँस के भक्षण करने वाले व्यक्तियों ने चन्द्रमा पर आक्रमण कर लिया, परन्तु ऐसा हम, ऐसा मैं नहीं उस राष्ट्र में दुग्ध का अधिक होने के नाते, दुग्ध अधिक होने के नाते दूध की महिमा है जो विज्ञान के ऊपर इतना विचार-विनिमय किया जा रहा है। जब यहाँ, परम्परागतों में मुझे स्मरण है जब दुग्ध का पान किया जाता, तो विज्ञान के ऊपर अधिक बल था, विज्ञानशाला ऐसी थी कैसी-कैसी विज्ञानशाला, चन्द्रमा में, मङ्गल में और बुध में और शुक्र में जाने वाली विज्ञानशाला, जानो यातायात भी होता रहता था।

धर्म और मानवता में अर्न्तद्वन्द्व नहीं होता

परन्तु स्मरण आता रहता है, आज देखो, इस विज्ञान में किसी प्रकार का, आज कोई भी किसी प्रकार की रूढ़ि हो, जैसा यह दो मत, उसमें नहीं हो सकेंगे, हो ही नहीं सकते। क्योंकि आज एक मानव मङ्गल पर जाना चाहता है, परन्तु मङ्गल पर जाने के पश्चात् वह देखो, उसी मार्ग से जायेगा, जिस मार्ग से देखो, द्वितीय मत के मानने वाला हो, मानो जायेगा। अब देखो, उसमें एक ही मत रहेगा, क्योंकि मार्ग एक है, और विज्ञान इस प्रकार का, परमाणु वही है, उसी प्रकार का यन्त्र है, परन्तु यन्त्र में किस प्रकार का अर्न्तद्वन्द्व नहीं है। अहा! इसी प्रकार देखो, योगी है, वह योगी प्राण और मन को एकाग्र कर लेता है, मन और प्राण की जो एकाग्रता है वह किसी भी मत-मतान्तर में द्वितीय नहीं हो सकती। परन्तु इसी प्रकार आज मेरा यह विचार है, कि हे भोले! पुरुषों सभी विचारकों को एक मत हो करके चलना है, क्योंकि धर्म और मानवता की रक्षा करनी है, यहाँ धर्म और मानवता में मानो किसी प्रकार का अर्न्तद्वन्द्व नहीं होना चाहिये और वह अर्न्तद्वन्द्व यदि रहेगा, तो कुछ काल के पश्चात् मानव अपने-अपने अर्न्तद्वन्द्व के लिये विराजमान रहो। आगे एक दूसरा मानव तुमसे वार्त्ता भी प्रगट

नहीं करेगा, आगे वह समय आ रहा है, क्या भयङ्कर जब अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। वह भयङ्कर अग्नि मानव को निगलती चली जाती है, मानव को निगलती चली जाती है, संसार अधोगति को प्राप्त हो जाता है, महाभारत काल में क्या हुआ, यही तो हुआ कि अपनी-अपनी रूढ़ि बन गई। मानो देखो, उन्होंने राष्ट्र की रूढ़ि बना ली, मानो देखो, उन्होंने राष्ट्र की रूढ़ि बनाई, परिणाम यह हुआ कि संसार का वैज्ञानिक समाप्त हो गया, संसार का मानव समाप्त हो गया।

महापुरुषों का एक मत

इसी प्रकार हमें विचार-विनिमय करना है, और सुन्दर विचारकों के समीप जा करके, मानो विचारों को हमें व्यक्त करना है। आज देखो, दयानन्द का विचार हो, देखो, आज मोहम्मद का विचार हो, ईसा का विचार हो, नानक का विचार हो, परन्तु विचार सबके बहुत सुन्दर हैं। यदि उनके मौलिक विचारों को लिया जायेगा, तो एक ही मत है, उन सभी महान् पुरुषों का एक मत है, शङ्कर के विचारों को लिया जाये, अहा! सभी का एक ही विचार है। परन्तु उन विचारों को सुगठित करने वाले बुद्धिमानों की आवश्यकता रहती है संसार में। परन्तु जब बुद्धिमान देखो, केवल संकीर्ण विचारों का बन जाता है, तो उसमें बुद्धिमानिता समाप्त हो जाती है। उसमें बुद्धिमता रहती ही नहीं, आज एक मानव, एक मत का, दूसरे मत की चर्चा कर ही नहीं सकता और करेगा तो वहाँ विवाद आ जायेगा। क्योंकि वह उन महापुरुषों की मौलिक चर्चाओं को नहीं जानता, कारण उसका यह है, कि मौलिक चर्चाओं को नहीं जानता, मौलिक चर्चाओं को जानने में विवाद रहता है, अहा! यह इसी प्रकार बहुत परम्परा से चला आ रहा है, आगे मैं इन चर्चाओं को ले जाना चाहता हूँ। केवल विचार यह है कि हमें विचारना है, हमें वास्तव में सुगठित और वेद की परम्परा को ले करके चलना है। क्योंकि आज हम एक-दूसरे की, मानव की मानवीयता पर और पोथियों पर और उनके ज्ञान पर विचार नहीं रहेगा, अशुद्धियों को त्याग दो, शुद्धता को अपना लो, यही मानवता का कर्त्तव्य है। यही मानववाद, वेदवाद कहता है, परम्परा से और इसी के आधार से राष्ट्रवाद है मानो देखो, जब एक-दूसरे मानव में अर्न्तद्वन्द्व ही नहीं रहेगा, तो नाना प्रकार

के दुराचारी व्यक्ति नहीं रहेंगे, और जब दुराचारी व्यक्ति नहीं रहेंगे तो राजा किस पर शासन करेगा, क्योंकि प्रजा अपना-अपना कार्य करती रहेगी। राजा तो इसीलिये होता है कि प्रजा धर्म से विहीन हो जाती है। धर्म की रक्षा करने के लिये, जब राजा यदि स्वयं उसके आङ्गन में आ करके केवल अपने स्वार्थ की पूर्ति करेगा, तो वह राजा नहीं, परन्तु राजा और प्रजा दोनों स्वार्थी बन करके अग्नि प्रदीप्त हो जायेगी, क्योंकि प्रायः ऐसा होता रहता है। तो **आज हमें विचारना यही है, कि हम एक मत हो करके, संसार को उत्तम बनायें, राष्ट्र को उत्तम बनायें और अपनी एक पतिका बना करके, पृथ्वी मण्डल को सुन्दर बनायें।** अहा! क्योंकि देखो, यहाँ ऐसा होता है और ऐसा पूर्व काल में था, जो कि कणाद और गौतम के काल में इसी प्रकार का था, गौतम और कणाद के काल में भी यही था, आगे देखो, यह समाज, संसार परम्परा से चला आ रहा है। अहा! देखो, राजा बन गये परन्तु राजा बन करके उन्होंने भोले प्राणियों को, उन्होंने नाना प्रकार की लोलुपता दे करके इस .....

शेष अनुपलब्ध .....

दिनाँक : 25 अगस्त, 1969
स्थान : जोर बाग, नई दिल्ली

नम्र-निवेदन

समिति के बैंक के खाते में दान की राशि हस्तान्तरण करने से दानदाताओं का नाम, पता व उद्देश्य इत्यादि की जानकारी बैंक से प्राप्त नहीं हो पाती इसलिए सभी दानदाताओं से नम्र-निवेदन है कि राशि बैंक के खाते में हस्तान्तरण करने के साथ-साथ समिति की वेबसाइट पर या निम्न किसी भी एक पते पर दान राशि का अन्य विवरण सहित सूचना देने का कष्ट करें–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मन्त्री
   डी-33, पञ्चशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   के-3, लाजपत नगर-III, नई दिल्ली-110024 मो.न. : 9810887207

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. मस्तिष्क में मन की प्रतिभा मानी है, मस्तिष्क में ही आत्मा की प्रतिभा मानी है।
2. यह जो हृदय है, इसको ब्रह्म का स्थान कहा गया है।
3. आयुर्वेद का ज्ञान तो वास्तव में ब्रह्म ज्ञान है।
4. यह जितना अन्न है, यह सभी औषधि कहलाया गया है।
5. कर्मठता ही तो जीवन है, जिसे हमें जानना है।
6. मानव अपनी इन्द्रियों से, इन्द्रियों का निदान भी कर सकता है।
7. औषधियों में प्राण शक्ति अधिक होती है इसलिये मानव कायाकल्पित हो जाता है।
8. जितनी भी शुभ प्रेरणा उत्पन्न होती हैं वह सब भगवान् की ही प्रेरणा हुआ करती है।
9. एकादशी का अभिप्रायः यह है कि हम मन, वचन, कर्म से अपनी इन्द्रियों को संयममय बनाये।
10. महाराजा शिव ने सबसे प्रथम राष्ट्र को अपनाया, तो उस दिन एकादशी का दिवस था।
11. एकादशी शिवरात्रि में जागरूक रहना बहुत अनिवार्य है।
12. व्रत नाम सङ्कल्प का है, व्रत नाम अच्छाइयों को लाना है।
13. व्रत नाम अपनी इन्द्रियों को विचारशील बनाना है, इन्द्रियों के ऊपर अनुसन्धान करना है।
14. सोम नाम ज्ञान को कहा गया है, विवेक को कहा गया है।
15. हृदय है – वह एक चेतना का स्थान माना गया है।
16. जो मानव चेतना को जानना चाहता है वह हृदयरूपी गुफा में ध्यानावस्थित हो जाता है।
17. जिस मानव को संसार में विशाल बनना है वह अपनी हृदयरूपी जो गुफा है, उसमें जो चेतना है उस चेतना को जानना हमारा कर्त्तव्य है।
18. जब हम सत्यवादी बन जाते हैं तो हमारा हृदय निर्मल और स्वच्छ बनने लगता है।

।। ओ३म् ।।

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

वैदिक कुमार त्यागी

श्रीमति पूनम त्यागी व श्री संजीव त्यागी जी निवास स्थान बल्लभगढ़, हरियाणा (मूल निवासी ग्राम दिनकरपुर, जिला मुजफ्फरनगर) ने अपने सुपुत्र चिरन्जीव वैदिक कुमार त्यागी के शुभ जन्मदिवस 8 मई 2022 के आगमन पर 5500 रु. का सात्त्विक सहयोग प्रतिवर्ष की भाँति उदारता से प्रदान किया है। जिससे कि ऋषि मुनियों के क्रियाकलाप को ऊर्ध्वा गति प्रदान करते हुए प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में उनके आशीर्वाद की छत्र-छाया भी निरन्तर स्मरण रूप में बनी रहे। उसी धारा को निरन्तर जागृत रखते हुए अपने सेवाकाल को भी बड़ी निष्ठा व कर्मठता से करते हुए लाक्षागृह बरनावा में रक्षा बन्धन की पावन वेला पर आयोजित यज्ञ में प्रति वर्ष पति-पत्नि अपने सुपुत्र सहित यजमान बनकर अपने जीवन में साहित्य का निरन्तर अध्ययन करते हुए अपने को परिवार सहित ऊर्ध्वा गति प्रदान करने में संलग्न हैं।

प्रिय वैदिक अपने माता-पिता की छत्रछाया में लगभग पिछले बीस वर्षों से साप्ताहिक यज्ञ केवल गऊ घृत से सम्पन्न करते हुए प्रतिदिन प्रातःकाल में पूज्यपाद-गुरुदेव के मन्त्र पाठ व मधु शान्ति पाठ के श्रवण करने में सन्लग्न हैं। आपने इस वर्ष कैमिकल इन्जीनियरिंग की शिक्षा को बड़ी विद्युता से सम्पन्न कर लिया है।

समिति त्यागी जी के सौभाग्यशाली पुत्र प्रिय वैदिक कुमार को जन्मदिवस की शुभकामनाएँ प्रदान करते हुए उज्ज्वल भविष्य के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है और समस्त परिवार का पुनः से आभार प्रकट करते हुए सुख, शान्ति, दीर्घायु व सर्वतोन्मुखी उन्नति के लिए भी ईश्वर से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	110.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	110.00
*3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	120.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	120.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	160.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	100.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	40.00
8.	आत्म-लोक	45.00
*9.	धर्म का मर्म	50.00
10.	शंका-निवारण	40.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व	50.00
12.	आत्मा व योग-साधना	40.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	150.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	150.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	140.00
17.	रामायण के रहस्य	50.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	50.00
19.	महाभारत के रहस्य	35.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	45.00
21.	रावण-इतिहास	65.00
22.	महाराजा-रघु का याग	35.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	40.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	40.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	50.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	40.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	45.00
28.	अश्वमेध-याग और चन्द्रसूक्त	50.00
29.	याग-मन्जूषा	45.00
30.	आत्म-दर्शन	35.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	40.00
32.	याग और तपस्या	70.00
33.	यागमयी-साधना	45.00
34.	यागमयी-सृष्टि	40.00
35.	याग-चयन	50.00
36.	दिव्य-रामकथा	150.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	50.00
38.	दिव्य-ज्ञान	45.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	140.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	55.00
41.	आत्म-उत्थान	45.00
*42.	तप का महत्त्व	50.00
43.	अध्यात्मवाद	45.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	45.00
45.	वैदिक-प्रभा	40.00
46.	प्रकाश की ओर	40.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	45.00
48.	वैदिक-विज्ञान	40.00
49.	धर्म से जीवन	40.00
50.	आत्मा का भोजन	45.00
51.	साधना	40.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	45.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	45.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	110.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	110.00
57.	माता मदालसा	60.00
*58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	110.00
*59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	110.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	160.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	110.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	150.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	110.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	60.00
65.	प्रभु-दर्शन	60.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	110.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	60.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	110.00
*69.	ब्रह्म की ओर	60.00
*70.	ईश्वर मिलन	60.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	110.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	110.00
*73.	नैतिक शिक्षा	60.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	110.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00
*76.	यौगिक प्रवचन माला भाग-18	120.00
*77.	यज्ञ विज्ञान	100.00
*78.	यौगिक प्रवचन माला भाग-19	120.00
79.	मानव दर्शन	150.00
80.	यौगिक प्रवचन माला भाग-20	160.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम् कर्मभूमि लाक्षागृह	10.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, पेनड्राइव के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध है–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं. 09897695391
2. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294, मोबाइल नं. 9810887207
3. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, डी-33 पञ्चशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
4. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
5. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)।
6. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। फोन नं. 0120-4202763, मो. नं. 9818079943
7. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
8. आचार्य अरविन्द कुमार शास्त्री, मं.न. 209 ग्रीन हाईटस A to Z रूड़की रोड़, मोदीपुरम्, मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09411823200
9. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पँचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
10. श्री शमीक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)।
11. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
12. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
13. श्री पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
14. श्री प्रदीप त्यागी सुपुत्र श्री महेश त्यागी, रघुनिवास 138 सर्वोदय कालोनी, मेरठ रोड़, हापुड़ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9758330473
15. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

सु. कुमारी नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली– स्मृति–श्रीमति शान्ति अबरोल व श्री देवराज अबरोल	1001 रुपये
श्रीमति रेणु तुली, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली– स्मृति–श्री रत्न तुली	1001 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री ज्ञानेश द्विवेदी	1000 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	501 रुपये
श्री कर्ण तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	501 रुपये
श्रीमती रुचिका तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	501 रुपये
श्री अरुण तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	501 रुपये
श्रीमती सुखमणी तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	501 रुपये
श्रीमती सुमन त्यागी, मुम्बई	501 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
मास्टर कवन्धि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज, दिल्ली	101 रुपये
कुमारी अञ्जलि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सात्विक त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज, दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये
कुमारी प्रीक्षा त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

मासिक सहयोग का आह्वान

आप सभी से समिति विनम्र भाव से प्रार्थना करती है कि मासिक सहयोग की राशि समय पर प्रेषित करने का सहयोग करें जिससे प्रकाशन निरन्तर ऊर्ध्वागति को प्राप्त होता रहें। **वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद-गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस अन्तरात्मा को जानने का प्रयास करें। हम आत्मवेत्ता बन करके अपनी मानवीय धारा में ऊँचा बन जाएँ। यह न सूर्य है न चन्द्रमा है न तारामण्डल है, न अग्नि है, न शब्द है। भगवन्! प्रकाश के देने वाला आत्मा है। आत्मा के कारण ही मानव का शरीर क्रियाशील बना रहता है। तो इसीलिए प्रत्येक मानव को आत्मा को जानना चाहिए आत्मवेत्ता बनने के लिए, आत्मचेतना में ही रत्त रहना चाहिए। क्योंकि जो हमारे शरीरों में भास रहा है, प्रकाशक बना हुआ है, उस प्रकाश को जानने के प्रकाश से प्रकाशित होना चाहिए। यह कैसा अद्‌भुत जगत है, इसके ऊपर विचारना है, बहुत गम्भीरता से मनन करना है। क्योंकि मनन करने वाला यह ब्रह्माण्ड है, प्रभु की जो रचना है वह बड़ी अद्‌भुत है। इसीलिए प्रभु का गुणगान गाना हमारे लिए अनिवार्य है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 50 : अंक : 588
जून 2022

मूल्यः
पन्द्रह रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R.No. DL (S)-20/3220/2021-2023
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2022-2023
POSTED AT KRISHNA NAGAR HP.O. N.D. ON 10/11-6-2022
Published on 5th day of the same month

वर्ष 50 : अंक : 588
जून 2022

मूल्यः
पन्द्रह रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R.No. DL (S)-20/3220/2021-2023
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2022-2023
POSTED AT KRISHNA NAGAR HP.O. N.D. ON 10/11-6-2022
Published on 5th day of the same month